संजय की कलम से ..

योगी का कोई शत्रु नहीं

अगर आप योगी बनना चाहते हैं तो आज से, अभी से यही दृढ़ संकल्प कीजिये कि बाबा, इस दुनिया में मेरा कोई शत्रु नहीं है, किसी के प्रति भी मेरे मन में शत्रुता का भाव नहीं होगा। वृत्ति में भी, संकल्प में भी या स्मृति में भी हमने किसी को शत्रु मान लिया तो हमारी लुटिया डूब गई। हम तैर नहीं सकते। इस संसार सागर, भव सागर से पार नहीं हो सकते क्योंकि यहाँ से हमें तैराकर ले जाने वाली है स्मृति। स्मृति रूपी नाव द्वारा ही हम इस जीवन रूपी यात्रा में, कलियुगी छोर से सतयुगी छोर तक जायेंगे।

कर्मों को श्रेष्ठ बनाने का केवल यही तरीका है कि हम अपने संकल्प, स्मृति और वृत्ति को ठीक करें। सबसे बड़ी बाधा वहाँ उपस्थित होती है, जहाँ हम किसी को अपना शत्रु मान बैठते हैं। बाबा ने कहा है कि हमारे शत्रु हमारे में रहे हुए पाँच विकार हैं। इनसे हमारी लड़ाई है। किसी मनुष्य से, किसी व्यक्ति से हमारी कोई लड़ाई नहीं है। उनसे हमारा क्या लेना-देना है? अगर कोई अपने स्वभाव से, संस्कारों से कुछ करता भी है तो जो जैसा करेगा, वैसा पायेगा। आप काहे की चिन्ता करते हो? जो गलत काम करता है, आप उसके लिए क्यों सोचते हो?

कबीर की झोंपड़ी बकरियों को काटने वाले कसाई के नज़दीक थी। वह अपनी झोंपड़ी में जाता था तो रास्ते में बकरे लटके हुए दिखते थे और जो कसाई था वो छूरा लेकर उनको काट-काटकर ग्राहकों को देता था। कबीर के मन को बड़ी ग्लानि होती थी, बुरा लगता था कि यह कैसा आदमी है, क्या करता है! गलत काम करता है, जानवरों को मारता है। वह दुख महसूस करता था। सारा सोचने के बाद, उसको लगा कि करता तो वह आदमी है, उसका असर मेरे ऊपर आता है, मेरी स्थिति खराब होती है। मैं इससे कैसे मुक्त होऊँ? तो उसने कहा –

'कबीरा तेरी झोंपड़ी,
गल कटियन के पास।
जो करेंगे सो भरेंगे,
तू क्यूँ भयो उदास।।'

तू काहे को चिन्ता करता है? जो करेगा सो पायेगा। तू उसको देखकर अपना मन क्यों खराब करता है? तू थोड़े ही कर रहा है? तू चलता चल अपने रास्ते पर। तो यदि कोई बुराई कर रहा है, बुरा काम कर रहा है, खराबी में फँसा हुआ है तो आप काहे को अपना नाक घुसेड़ते हो? काहे को अपने को दुखी करते हो, तकलीफ़ देते हो? ❖

अमृत-सूची

- संगठन में बल है *(सम्पादकीय)*..... 2
- पुरुषोत्तम संगमयुग में..... 4
- जीवन सफल हो गया *(कविता)*..... 6
- सारे ज्ञान का सार है..... 7
- 'पत्र' संपादक के नाम..... 9
- सर्वोच्च सुधारक.....10
- कभी किसी का बुरा न चाहें...11
- तीन पैर पृथ्वी बाबा ने.....12
- सचित्र सेवा समाचार.....13
- क्यों कलंकित हुए पवित्र.....15
- बाँटो खुशियों की सौगात *(कविता)*.....16
- सचित्र सेवा समाचार.....17
- व्यसन – मौत की शहज़ादी.. 21
- श्रेष्ठ सौन्दर्य प्रसाधन..... 24
- किसने किसको बाँधा.....25
- गृहस्थ और संन्यास.....26
- याद और फ़रियाद..... 28
- पवित्र जीवन: मज़ा ही मज़ा...29
- आगे कदम बढ़ाना है *(कविता)*.....31
- श्रद्धांजलि 32

सदस्यता शुल्क

भारत	वार्षिक	आजीवन
ज्ञानामृत	70 /-	1,500/-
वर्ल्ड रिन्युअल	70/-	1,500/-
विदेश		
ज्ञानामृत	700 /-	7,000/-
वर्ल्ड रिन्युअल	700/-	7,000/-

शुल्क केवल '**ज्ञानामृत**' अथवा '**द वर्ल्ड रिन्युअल**' के नाम से ड्राफ्ट या मनीऑर्डर द्वारा भेजने हेतु पता है- संपादक, ओमशान्ति प्रिंटिंग प्रेस, ज्ञानामृत भवन, **शान्तिवन-307510 (आबू रोड) राजस्थान।**

- शुल्क के लिए सम्पर्क करें -
09414006904, 09414154383

संगठन में बल है

'फल वाले की दुकान में गुच्छे से अलग हुए केलों को देखकर उसने भाव पूछा तो दुकानदार एक रुपये में एक केला देने को तैयार हो गया। फिर उसकी नज़र गुच्छे पर पड़ी तो दुकानदार ने कहा, 'गुच्छा 18 रुपये दर्जन के भाव से है।' उसे आश्चर्य हुआ कि केला वैसे तो एक रुपये में एक परन्तु गुच्छे में लगा होने पर डेढ़ रुपये में क्यों? दुकानदार ने कहा, 'गुच्छे की कीमत है साहब, अलग-अलग की कीमत कम हो जाती है।'

दम होता है संगठित आवाज़ में

उपरोक्त वार्तालाप में एकता के बल का सशक्त संदेश समाया है। कोई व्यक्ति कितना भी लायक हो, योग्य हो परन्तु यदि वह अकेला है तो उसका भविष्य सन्देहात्मक है परन्तु कम योग्य समझा जाने वाला व्यक्ति भी यदि संगठन के साथ मिल-जुलकर चलने लगता है तो उसकी उपयोगिता बढ़ जाती है। तभी तो कहावत बनी,'अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता।' आज बहुमत की क़दर है। इसलिए हर वर्ग ने अपने-अपने संगठन बना लिए हैं। मज़दूर संघ, रिक्शा चालक यूनियन, कुली संगठन, पत्रकार संघ, शिक्षक संघ आदि के अस्तित्व में आने के पीछे कारण यही है कि एक की आवाज़ नहीं सुनी जाती पर बहुतों की आवाज़ में वह दम होता है कि वह कहीं तक भी पहुंच जाती है। एक होकर रहने में बड़े फायदे हैं।

संयुक्त परिवार प्रणाली

पुराने समय में संयुक्त परिवार प्रणाली थी। एक सदस्य के बीमार होने पर दूसरा उसका काम कर देता था। माँ के व्यस्त होने पर बच्चे को सम्भालने के लिए कई हाथ आगे आ जाते थे। समस्या के आने पर सब उसे अपनी समस्या समझकर चिन्तन करते थे और कइयों के सहयोग से हल निकल आता था। किसी एक की आर्थिक कमज़ोरी भी सर्व के सहयोग से भरतू हो जाती थी। बच्चों को बड़े-बूढ़ों से अच्छे संस्कार मिल जाते थे और अनेकों के बीच में रहने से व्यक्ति के अपने मन, वचन, कर्म पर बहुत ध्यान रहता था। इस प्रकार, हरेक का व्यवहारिक पक्ष, चारित्रिक पक्ष मज़बूत रहता था परन्तु आज के विभक्त परिवारों में अनेक समस्यायें हैं। हर व्यक्ति स्वतन्त्रता की आड़ में स्वच्छन्द होता जा रहा है। अहम् और मैं-पन उफान पर है। सीखने, झुकने, समायोजन करने के रास्ते बन्द हो जाने से व्यक्ति तनावग्रस्त है, अकेलापन महसूस करता है और बहुधा कूप मेंढक की तरह अपने दायरे में सिमटा रहता है। उसकी सामाजिक साख भी गिरी है और मनोबल भी। परिवार बिखरने से सुख, आस्था और पवित्रता भी बिखर जाती है।

शरणागत बना शरणदाता

अकेले तिनके का कोई अस्तित्व नहीं होता परन्तु जब उसे अन्य तिनकों का साथ देकर झाड़ू में बांध दिया जाता है तो वह उपयोगी हो जाता है और अपने जैसे कई तिनकों को इशारे से नचाने लगता है। झोंपड़ी भी तिनकों की एकता से ही बनती है। जिस तिनके को कहीं शरण नहीं मिल रही थी, वह एकता के सूत्र में बंधकर कइयों को शरण देने वाला बन जाता है।

जोड़ते हैं मूल्य

माला को देख लीजिए, बिखरे मनके इधर-उधर गिरते-पड़ते रहते हैं परन्तु माला में पिरो देने के बाद उनकी कीमत बढ़ जाती है। जिस तरह से मनकों को धागा जोड़ता है, आत्मा को भी दूसरी आत्मा से जोड़ने वाला है गुण रूपी सूत्र अर्थात् मूल्यों रूपी धागा। जब हमारे बीच प्रेम, नि:स्वार्थ भाव, त्याग, दया, सत्यता, पवित्रता आदि गुण आ जाते हैं तो हमारा, न बिखर सकने वाला जुड़ाव हो जाता है। आपने कबूतरों की कहानी सुनी होगी, जाल में फँस गए तो उनके सरदार ने कहा, एक साथ ज़ोर लगाओ और जाल सहित उड़ जाओ। 'एक साथ' का मन्त्र काम कर गया और कबूतर स्वतन्त्र हो गए।

पाण्डवों की एकता

यादगार शास्त्र महाभारत में दिखाते हैं कि शकुनि हर सम्भव प्रयास से पाण्डवों की एकता को तोड़ना

चाहता था। वह कहता था कि मेरा एक ही सपना है कि इनमें फूट पड़े परन्तु राज्य की हार, द्रौपदी का अपमान आदि कड़ी परीक्षाएँ आने पर भी उनकी एकता के किले में दरार नहीं आई। बड़े भाई ने जो कहा, सभी ने स्वीकार किया। लोग चर्चा करते थे कि एक नारी है और पाँच भाई हैं, कभी मनमुटाव नहीं होता होगा क्या, पर नहीं, वो तो जैसे पाँच शरीर और एक आत्मा थे। दूसरी तरफ दुर्योधन को विकर्ण, युयुत्सु आदि के विरोध का सामना करना पड़ा। पाण्डव, एकता के बल से जीत गए और कौरव सेना, संख्या में ज़्यादा होते भी एकता के अभाव में विनाश को प्राप्त हुई।

समूह में रहिए मन को निर्जन बनाइये

अंग्रेज़ों ने भारतीयों को कमज़ोर करने के लिए 'फूट डालो और राज करो' की नीति अपनाई। वे किसी एक देशी राजा का पक्ष लेकर और दूसरे देशी राजा का विरोध करके उन्हें आपस में शत्रु बना देते थे और इस प्रकार दोनों की ही सम्पत्ति को हड़प जाते थे। दोनों राजा कमज़ोर हो जाते थे। महात्मा गांधी और उनके साथियों ने सारे देशवासियों को यह सन्देश दिया कि तुम एक देश के, एक भारत माँ के सपूत हो, एक तिरंगा तुम्हारा आदर्श है तो उस एकता के बल से उनमें एक होने की भावना जागी, देश संगठित हुआ और संगठन के बल के आगे, शक्तिशाली कहे जाने वाले अंग्रेज़ भी कमजोर पड़ गए, देश आज़ाद हो गया। आध्यात्मिक भाषा में यह कहा जाता है कि साधक को अकेले रहना चाहिए, लेकिन इस अकेलेपन का अर्थ निर्जन जंगल में वास करना नहीं है। वह शारीरिक रूप से समूह में रहते हुए भी मन को निर्जन बना सकता है। मन में किसी वस्तु, व्यक्ति, वैभव की तस्वीर ना रखना ही सच्चा एकान्त है। संगठन में रहते भी एक बल एक भरोसे के आधार पर चलना ही एकता है। संगठन में रहने से व्यक्ति का व्यक्तिगत अहम् गल जाता है। वह अपने को आगे ना रखकर संगठन को आगे रखना चाहता है और संगठन के सदस्यों के सुख-दुख को अपने सुख-दुख की न्यायीं समझते हुए बेहद के भाव में, परोपकार के भाव में रहता है। वह सोचता है कि मेरे अच्छे या बुरे कर्म का प्रभाव इतने बड़े संगठन को प्रभावित करेगा इसलिए मुझे ऐसे कार्य करने हैं जिनसे संगठन मज़बूत बने, ख्याति को प्राप्त करे, समृद्ध हो और इसके निमित्त लोग हलके रहें।

बड़े लाभ के लिए छोटे लाभ का त्याग

संगठन का आधार एकमत है। जब हम एक परमात्मा की मत पर चलते हैं और सर्व सम्बन्धों से उसे अपना स्वीकार कर लेते हैं तो भिन्न मत रहती ही नहीं है। 'परमात्मा मेरा है', यह समझ लेने के बाद, 'पराया कोई है ही नहीं,' यह भावना आ जाती है। भगवान के सब बच्चे, मेरे भाई-बहनें हैं, इस आधार से भी एकता निर्मित होती है। कई बार संगठन के हित के लिए हमें अपनी कई योग्यताओं को छिपाना भी पड़ सकता है और कई सुविधाओं को त्यागना भी पड़ता है। परन्तु बड़े लाभ के लिए छोटा लाभ छोड़ देना तो आवश्यक है ही। फिर संगठन हमें सुरक्षा, स्थिरता, अपनत्व, सुविधा तथा अनेक प्रकार के सुअवसर प्रदान करता है तो उनके आगे यह त्याग क्या है? कुछ भी नहीं। अत: हमें यह समझ लेना चाहिए कि संगठन रूपी शरीर के हम महत्त्वपूर्ण अंग हैं। हमारा स्वस्थ रहना अनिवार्य है परन्तु संगठन के शेष अंगों का स्वस्थ रहना भी उतना ही अनिवार्य है। यदि कान में दर्द हो तो उसका असर हाथ-पाँव, आँख, मुख अर्थात् सभी अंग-प्रत्यंग को प्रभावित करता है। दर्द एक जगह उठता है पर फैल जाता है पूरे शरीर में। यही बात संगठन रूपी शरीर पर भी लागू होती है। इसलिए हमें व्यक्तिगत स्वार्थ का त्याग करके, हद की इच्छाओं से ऊपर उठकर, तेरे-मेरे की संकीर्णताओं से मुक्त होकर सारे संगठन के कल्याण की बात सोचनी है और संगठन की सुरक्षा, मजबूती, एकता तथा उन्नति को प्राथमिकता देते हुए अपने पुरुषार्थ को वैसी ही गति देनी है। ऐसी जिम्मेवारी समझने से कमजोरियाँ, लापरवाहियाँ, अलबेलापन, अकेलापन आदि विकृतियाँ स्वत: समाप्त हो जाएंगी।

– ब्रह्माकुमार आत्म प्रकाश

पुरुषोत्तम संगमयुग में मुक्ति और जीवनमुक्ति का सच्चा रहस्य

• ब्रह्माकुमार रमेश शाह, गामदेवी (मुंबई)

परमपिता शिव परमात्मा परमशिक्षक के रूप में कैसे कार्य करते हैं, यह पिछले लेख में हमने जाना। इस लेख में परमात्मा के परमसतगुरु रूप के कर्त्तव्य की चर्चा करेंगे।

परमात्मा त्रिकालदर्शी हैं; सृष्टि के आदि, मध्य और अंत का संपूर्ण ज्ञान उनके पास है। वे रचयिता हैं और रचना की पूरी जानकारी रखते हैं। उनके अलावा अन्यों द्वारा सृष्टि की रचना अर्थात् आदिकाल से अंतकाल तक के बारे में जो भी बताया गया वो केवल अनुमान है। इसका कारण अब हमें मालूम पड़ा कि सृष्टि की रचना के समय वे विद्वान धर्मनेता तो होते ही नहीं इसलिए विद्वानों को अंदाज़ा लगाना पड़ता है कि सृष्टि की रचना कैसे होती है। रचना कैसे हुई, इसके बारे में दो प्रमुख विचारधाराएँ हैं – एक उत्क्रांतिवाद जिसके प्रणेता थे भ्राता चार्ल्स डार्विन। फिर सृष्टि की रचना कब हुई होगी उसके बारे में तीन मुख्य विचार हैं, पहली विचारधारा है कि सृष्टि के आदिकाल में ही जिसे बिग बैंग थ्योरी *(Big Bang Theory)* कहते हैं अर्थात् बहुत बड़ा धमाका हुआ। इस विचारधारा के मुताबिक यह धमाका 600 अरब वर्ष पहले हुआ। दूसरी विचारधारा के मुताबिक यह धमाका 500 अरब वर्ष पहले हुआ और तीसरी विचारधारा के अनुसार 50 अरब वर्ष पहले हुआ (इन वैज्ञानिक विचारधाराओं के बीच में अंतर 450 से 550 अरब वर्ष का होने के बावजूद भी लोग इन्हें सत्य और वैज्ञानिक मानते हैं। यह विधि की वक्रता है)।

दूसरी मुख्य विचारधारा धार्मिक अर्थात् आस्तिक लोगों की है। धर्म के क्षेत्र में सब मानते हैं कि परमात्मा ने सृष्टि रची। क्यों रची, यह प्रश्न नहीं हो सकता है। आदि शंकराचार्य कहते हैं, यह प्रश्न उत्पन्न नहीं हो सकता क्योंकि परमात्मा स्वयं मालिक हैं। उन्होंने लीला करने के लिए सृष्टि रची। इन विचारधाराओं में भी अनेक मतभेद हैं जैसे कि एक मत है, आदिकाल में एक ही परमात्मा रूपी महाज्योति से सभी आत्माएँ निकली और संपूर्णता प्राप्त करने के बाद आत्मायें परमात्मा रूपी महाज्योति में लीन हो जाती हैं। दूसरा मत है जिसमें प्रमुख सांख्य शास्त्र है जिसके मुताबिक पुरुष अर्थात् आत्मा, परमात्मा और प्रकृति अनादि हैं और अनादि काल से अब तक कर्त्तव्य करते आए हैं। और भी कई सिद्धांत अन्य आचार्यों ने लिखे हैं जैसेकि शुद्ध अद्वैत, शुद्धाशुद्ध अद्वैत, विशिष्ट अद्वैत आदि-आदि और सबने सृष्टि के आदि और अंत के बारे में अपने विचार लिखे हैं।

प्रस्तुत लेख का लक्ष्य है कि सृष्टि का अंत कैसे होता है, इसके बारे में विचार करना। सृष्टि का अंत कैसे होगा, इस बारे में कोई उत्तर वैज्ञानिकों के पास नहीं है क्योंकि वे आत्मा और परमात्मा आदि को नहीं मानते हैं। किंतु धर्म के क्षेत्र में मुक्ति और जीवनमुक्ति के बारे में अनेक प्रकार की विचारधारायें हैं जैसे रामगीता में गुरु वशिष्ठ और प्रभु राम के संवाद का हनुमान जी साक्षी है। उसमें बताया गया है कि मुक्ति प्राप्त करने के लिए सात भूमिकाओं को पार करना पड़ता है। प्रत्येक भूमिका को पार करने के लिए दो-तीन जन्मों के तीव्र पुरुषार्थ की ज़रूरत पड़ती है और ऐसे बहुत जन्मों के अंत में पाँचवीं भूमिका में पहुँचते हैं जिसे मुक्ति कहते हैं। और पाँचवीं से छठवीं भूमिका तक पहुँचने के समय शरीरधारी आत्मा को एक झटका-सा होता है और वह मुक्त हो सकती है। ऐसी मुक्ति प्राप्त करने वाले प्रमुख विद्वानगणों में गुरु दत्तात्रेय का नाम है

जिन्होंने पाँचवीं भूमिका से छठवीं भूमिका में जाने के पहले शरीर छोड़ दिया और मुक्त हो गए। सातवीं भूमिका को पार करने वाले को जीवनमुक्त कहते हैं। वो जब शरीर छोड़ता है तो ज्योति में ज्योति समा जाती है, ऐसा गुरु वशिष्ठ ने श्री राम को कहा रामगीता में।

इस पर मातेश्वरी सरस्वती से चर्चा हुई थी तो उन्होंने कहा – इस तरह से पाँचवीं और सातवीं भूमिका पार करने वाले दुनिया में वापस तो आते ही नहीं तो इनकी सद्गति अर्थात् मुक्ति-जीवनमुक्ति का अंदाज़ा कैसे हो सकता है। अत: यह भी अनुमान है।

सांख्य शास्त्र वाले कहते हैं कि मुक्ति और जीवनमुक्ति प्राप्त करने वाली आत्मायें ऊपर में परमात्मा के पास रहती हैं और जब-जब आवश्यकता पड़ती है तब-तब परमात्मा उन आत्माओं को भेजते हैं। वे आत्मायें सृष्टि को पतित बनने से रोकने का दिव्य कर्त्तव्य करके वापस चली जाती हैं। इस विषय पर भ्राता आनंद जी (दैवी भ्राता बृजमोहन के पिताजी) के साथ मेरी चर्चा हुई थी और उन्होंने बताया कि रमेश जी, अभी इस झमेले में क्यों पड़ते हो? अभी तो सभी आत्मायें पतित हैं ही और उन्हें पावन बनने का पुरुषार्थ करना ही है और पावन बनने के बाद उनकी क्या गति-सद्गति होती है वह उस समय का प्रश्न है। चाहे आत्मा महाज्योति में मिल जाती है या अलग रहती है अर्थात् अन्तिम भूमिका पर पहुँचने के बाद की चर्चा में अभी समय क्यों गँवायें? अभी पुरुषार्थ कर पावन बनना है और पुण्य कार्य करना है। वर्तमान का ध्यान रखें। भविष्य में क्या होगा, यह मुक्ति और जीवनमुक्ति प्राप्त करने के बाद का प्रश्न है।

अभी हमें परमात्मा द्वारा ज्ञान प्राप्त हुआ है कि सृष्टि का आदि, मध्य और अंत कैसे होता है। शिवपिता परमात्मा ने बताया है कि सृष्टि रूपी ड्रामा अनादि है अर्थात् न आदि है, न अंत है और कोई भी पार्टधारी बीच में से इस ड्रामा को छोड़कर नहीं जा सकता। सभी आत्मायें अंत में सृष्टि रंगमंच पर उपस्थित हो फिर साथ में ही परमधाम चले जाते हैं। वहाँ से, पुरुषार्थ प्रमाण प्राप्त किए हुए पद के अनुसार नंबरवार वापस सृष्टि में आते हैं अर्थात् हर आत्मा का पार्ट भी अनादि है।

परमसतगुरु परमात्मा शिव के महावाक्य हैं कि ज्योति में ज्योत समाना आदि-आदि सिद्धांत वास्तविक हैं ही नहीं तो उनके पुरुषार्थ से कुछ प्राप्ति भी नहीं है।

परमात्मा ने परमसतगुरु के रूप में मुक्ति-जीवनमुक्ति की व्याख्या बताई है। अव्यक्त मुरली (24 मार्च, 2009) में बताया है कि सबसे पहले बड़े ते बड़ा खज़ाना है ज्ञान धन, जिससे मुक्ति और जीवनमुक्ति की प्राप्ति होती है। पुरानी देह और पुरानी दुनिया से मुक्ति-जीवनमुक्ति प्राप्त कर मुक्तिधाम में जाने का खज़ाना सभी बच्चों को प्राप्त है। परमात्मा के इन महावाक्यों का अर्थ है कि मुक्ति अर्थात् पुरानी देह और पुरानी दुनिया से मुक्त अर्थात् देह और देह के संबंध और उसके लगाव से मुक्त और किसी भी प्रकार के लेप-क्षेप से मुक्त, इसी को ही जीवनमुक्त अर्थात् बंधनों से मुक्त स्थिति कहा जाता है। मुक्ति का दूसरा अर्थ है, मुक्तिधाम में जाने का रास्ता प्राप्त करना।

अब हम आत्माओं को परमात्मा के द्वारा मालूम पड़ा है कि परमधाम जाने के लिए कोई पुरुषार्थ नहीं करना पड़ता। यदि विकर्मों को भस्म न करें तो भी धर्मराजपुरी में जाकर पापकर्मों की सज़ा खाकर मुक्तिधाम जायेंगे। इसलिए पुरुषार्थ – मुक्तिधाम में जाने से पहले धर्मराजपुरी में न जाना पड़े, इसके लिए करना है। एक बार मैंने मधुबन के क्लास में पूछा, धर्मराजपुरी में कौन जाना चाहता है और वहाँ जाए बिना परमात्मा के साथ प्यार से मुक्तिधाम कौन जाना चाहता है? परमात्मा के साथ सीधा परमधाम जाना सब चाहते थे परंतु एक भाई ने कहा, मुझे धर्मराजपुरी में जाना है। मैंने पूछा, ऐसा क्यों? उसने कहा, मैंने ब्रह्मा बाबा, मम्मा और एडवांस पार्टी वालों को नहीं देखा, वे वहाँ देखने को

मिलेंगे और मुझे नई-नई दुनिया देखने की इच्छा है तो देखूँ कि धर्मराजपुरी कैसी होती है। वहाँ की सज़ा का थोड़ा अनुभव कर, फिर मुक्तिधाम जाना चाहता हूँ। उस भाई का अपना विचार था परन्तु हमारा पुरुषार्थ यही हो कि हमें धर्मराजपुरी में ना जाना पड़े।

अभी परमात्मा ने परमसतगुरु के रूप में मुक्ति-जीवनमुक्ति का वास्तविक रहस्य बताया है। मुक्ति-जीवनमुक्ति विनाश के पहले ही मिल सकती है। भक्ति मार्ग में बताए अनुसार मुक्ति के लिए अनेक जन्मों का पुरुषार्थ जरूरी नहीं है। प्यारे ब्रह्मा बाबा के पुरुषार्थ से समझ में आता है कि उन्हें 32 वर्षों के अथक पुरुषार्थ के फल रूप में, पुरानी देह, पुरानी दुनिया से मुक्त हो, जीवनमुक्ति की स्थिति प्राप्त कर, सूक्ष्मवतन में परमपिता परमात्मा के दायें हाथ *(Right hand)* बनकर रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ और अंग-संग रहने की प्राप्ति इतनी महान है कि शिव बाबा ने अनेक मुरलियों में बापदादा शब्द ही प्रयोग किया है। इसी अनुभव के आधार पर प्यारे ब्रह्मा बाबा, प्रथम श्री नारायण के रूप में अखंड, अटल, निर्विघ्न सतयुगी राज्य कारोबार के निमित्त बनते हैं और अभी भी शिवपिता परमात्मा हमें कहते हैं, फालो ब्रह्मा बाबा और यही संस्कार हमारे में सतयुग में होंगे और हम फालो करेंगे श्री लक्ष्मी और श्री नारायण को।

शिवपिता परमात्मा ने संगमयुग की महिमा का वर्णन करते हुए बताया है कि संगम का यही श्रेष्ठ समय है जिसमें बापदादा द्वारा सर्व खज़ाने प्राप्त होते हैं। संगमयुग के अलावा और कोई भी युग में खाता जमा करने का बैंक नहीं है।

शास्त्रों में अनेक विद्वान-आचार्यों द्वारा जो प्राप्ति है, उससे अलग, संगमयुग में प्राप्त वास्तविक ज्ञान के आधार पर एक ही जन्म में मुक्ति-जीवनमुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। अष्टरत्नों की माला का दाना बन जाना, ये है हमारे पुरुषार्थ का सच्चा मार्गदर्शन और विधि। उम्मीद है कि हम सब आत्मायें इस विधि द्वारा सच्ची मुक्ति और जीवनमुक्ति प्राप्त करें, वैजयंती माला के मणके बनें। परमात्मा सतगुरु के रूप में हमें इस तरह मुक्ति एवं जीवनमुक्ति का अर्थ बताकर, इस पुरानी सृष्टि और पुरानी देह के लगाव से मुक्त करते हैं। यह लेख पढ़ आप स्वयं निर्णय करें कि हमें कौन-सी मुक्ति-जीवनमुक्ति चाहिये। मृगतृष्णा समान पुरानी मान्यता वाली मुक्ति-जीवनमुक्ति या शिव परमात्मा द्वारा बताई गई पतित दुनिया, देह, देह के संबंधों से मुक्ति और परमात्मा के साथ मुक्तिधाम की यात्रा? निर्णय आपका। ❖

जीवन सफल हो गया

ब्रह्माकुमार सत्यप्रकाश, हनुमानगढ़ी (उ.प्र.)

एक बाबा मिला, मुझको सब कुछ मिला
मेरा जीवन तो जैसे सफल हो गया

तन भी पावन हुआ, मन भी पावन हुआ
मैं पतित था, पतित से विमल हो गया

टूटे बंधन सभी, सोचा न था कभी
रहके कीचड़ में, फिर भी कमल हो गया

लौ जो शिव से लगी, माया झट से भागी
ज्ञान पर वार उसका विफल हो गया

दुनिया ढूँढ़े जिसे, उसने ढूँढ़ा मुझे
होके उसका मैं बिल्कुल सरल हो गया

सारे ज्ञान का सार है मीठा बनना

• दादी जानकी

ईमानदारी से अपने आपको देखो, चेक करो कि मेरे में क्या कमी है? **दूसरों में क्या कमी है, वो मत देखो। यही बाबा की बात दिल से मान लो तो मीठे बन जायेंगे। बातों का सामना नहीं करना है, समा लेना अच्छा है। अन्तर्मुखी रहना अच्छा है। बाहरमुखता कड़वा बना देती है। दूसरा क्या करता है... ऐसा ज़रा भी सोचेंगे तो कड़वे हो जायेंगे। जैसे छोटी-सी सैक्रीन की गोली कितना अच्छा काम करती है, ऐसे सारे ज्ञान का सार है मीठा बनना।** बाबा सर्वशक्तिवान है तो युक्तिवान भी बहुत है। युक्ति माना सिद्धि को पाने की कोई-न-कोई सहज विधि को अपनाना। दिलाराम बाबा हमारे दिल को ऐसा ठीक कर देता है जो हमारा दिल मज़बूत हो जाता है। सदा ही दिल आराम में रहे तो हम मीठे रहेंगे। कभी बेआरामी हुई तो कड़वे हो जायेंगे। तो अपना दिल खोलके देखो, दिल को आराम देने वाला दिलाराम बाबा बैठा है या और कोई?

फालतू चीज़ें भी अपने पास नहीं रखना है, नहीं तो बुद्धि उनमें जाती रहेगी। चीज़ हो भी तो उसे सेवा में यूज़ करके सफल कर दो। कोई कुछ देता है तो प्यार से ले लो फिर किसी बाबा के बच्चे को देके खुश करो तो उसे भी बाबा की याद आयेगी। बाकी लेन-देन या चाहिए-चाहिए करते रहेंगे तो बाबा की याद भूल सकती है। इसको ऐसे नहीं करना चाहिए, यह सोचा तो भी बाबा याद नहीं आयेगा। बाबा भी बहुत हठीला है। अगर कोई विधिपूर्वक याद नहीं करते तो कभी याद का अनुभव नहीं करायेगा। मुरली भी सुनेंगे, सुनी न सुनी ऐसे ही चले जायेंगे। ज्ञान-योग से खुशी का, शक्ति का अनुभव नहीं होगा क्योंकि विधिपूर्वक सच्ची दिल से, उस अर्थ और भावना से याद नहीं करते हैं।

हमारे जीवन में क्या कमी है वो फट से बाबा के पास पहुँचता है। मुझे पुरुषार्थ करना है, तो बाबा कोई-न-कोई तरीका टच करायेगा, शक्ति भी देगा और जो सेवा करानी है वो सेवा सामने ले आयेगा। दिल से सेवा करने से अच्छा अनुभव होता है। सेवा है ही बाबा की याद दिलाना। हमारी याद की ऐसी परिपक्व अवस्था हो जाये जो कुछ भी हो जाये, अवस्था को कोई हाथ न लगा सके। अंगद मिसल हूँ, हनुमान मिसल हूँ। हनुमान के अन्दर में राम है, सेवा करके भगवान के आगे बैठ जाता है। फिर जो हुक्म मिलता है, सेवा करता है। हनुमान खुद सेवा का प्लान नहीं बनाता है, भगवान के आगे बैठता है, भगवान हुक्म करता है, वह कर लेता है। कितनी भी कोई हिलाने वाली बात

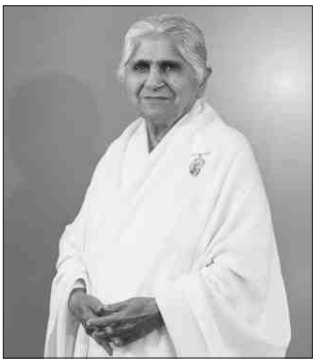

आये, पर अंगद मिसल मजबूत है। तो यह पुरुषार्थ करना पड़ेगा। थोड़ा भी ध्यान रखेंगे तो हुआ ही पड़ा है। होगा, नहीं होगा, यह सोचना भी अच्छी बात नहीं है। भगवान कहते हैं, बच्चे, कल्प पहले तुमने किया है, बाबा करा रहा है इसलिए हुआ ही पड़ा है, हो ही जायेगा। सिर्फ बाबा जैसे करता-कराता है, उसमें हाँ-हाँ करते रहें तो भी बेड़ा पार है। बताते हैं, हनुमान ने पूंछ को इतना बड़ा कर लिया जो लंका को जलाने वाला हो गया। तो यह क्या है? योगबल। हनुमान को देख करके सबको राम याद आने लग जाता है।

नाउम्मीदी और निराशा का ख्याल या मैं बड़ा हूँ, बहुत अच्छा हूँ, ये ख्याल अन्दर से तभी खत्म होंगे जब ध्यान रहे कि मैं आत्मा, परमात्मा की सन्तान ब्रह्मा मुख वंशावली हूँ। ब्रह्मा बाबा को देखो, निराकारी, निर्विकारी, निरहंकारी हैं, ऐसे मैं भी बन जाऊँ, इसी ख्याल में रहें। ❖

'इंडिया बुक ऑफ रिकार्डस' की वरिष्ठ संपादिका बहन नीरजा रॉय चौधरी, राजयोगिनी दादी जानकी को 'अधिकतम स्थिर मन वाली महिला' प्रमाण-पत्र तथा 'अधिकतम रसोई गैस उत्पादक सोलार सिस्टम' प्रमाण-पत्र और मोमेन्टो प्रदान करते हुए।

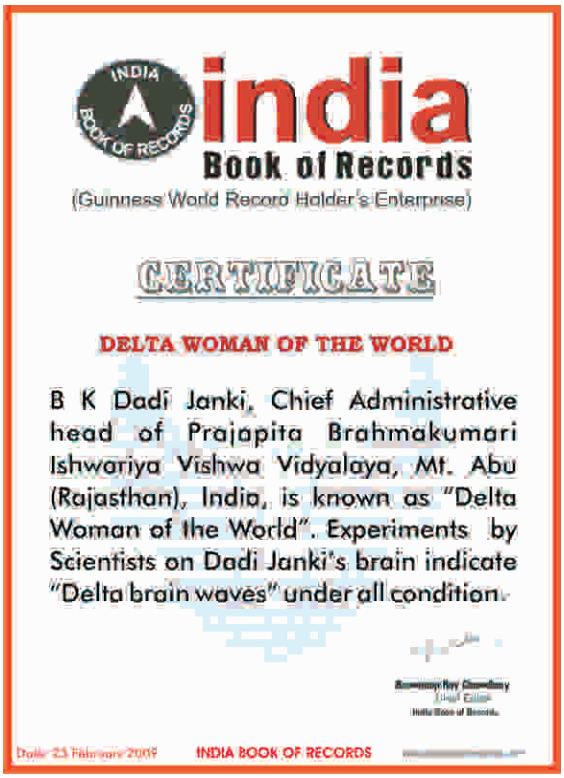

ब्र. कु. दादी जानकी जी को 'इंडिया बुक ऑफ रिकार्डस' में 'अधिकतम स्थिर मन वाली महिला' के रूप में मान्य किया गया।

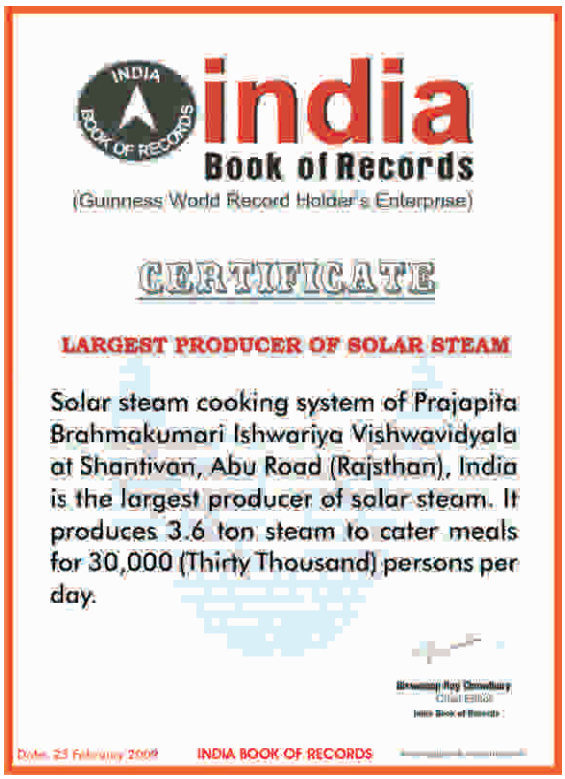

शान्तिवन (आबू रोड) का सोलार सिस्टम 'इंडिया बुक ऑफ रिकार्डस' द्वारा 'अधिकतम रसोई गैस उत्पादक सोलार सिस्टम' के रूप में दर्ज़ किया गया

'पत्र' संपादक के नाम

प्रश्न : परमात्मा शिव सर्वशक्तिवान और कल्याणकारी हैं फिर भी बहुत सारे बेकसूर बच्चे, औरतें तथा आदमी मारे जा रहे हैं। परमात्मा रक्षा क्यों नहीं करते?

– सुशीला, वस्त्रापुर, अहमदाबाद

उत्तर : परमात्मा सर्वशक्तिवान भी हैं, दयालु भी हैं, रक्षक भी हैं और काल के पंजे से छुड़ाने वाले भी हैं फिर भी अकाल काल का ग्रास बनने वाले लोग उनकी रक्षा के पात्र नहीं बन पा रहे हैं, इसके पीछे एक बहुत बड़ा कारण है। कारण है हमारे दुष्कर्म। भले ही देखने में हम बेकसूर हैं परन्तु काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार रूपी दुष्कर्मों से तो हम सभी ग्रसित हैं। कोई भी परिणाम कारण के बिना नहीं हो सकता। जब विकारों रूपी कारणों का निवारण होगा तो हम स्वत: सुरक्षित हो जायेंगे।

जो लोग आज हमें बेकसूर नज़र आ रहे हैं उनका भूतकाल अर्थात् पिछला जन्म कैसा था, वो बात तो गुप्त ही है। यदि पूर्व कर्मों के बंधन अनुसार किसी को छोटी आयु में ही जाना है तो यह उसके कर्म की प्रबलता है। कर्म की प्रबलता को परमात्मा की याद से समाप्त किया जा सकता है परंतु परमात्मा की याद के लिए मनुष्य न समय निकालता है, न रुचि रखता है इसलिए वह प्रबलता जीवन पर भारी पड़ती है।

एक अन्य पहलू यह भी है कि पहले जमाने में छोटे-बड़े सब ऐसे कर्म किया करते थे कि उन्हें दिन में कई बार, कइयों से यह दुआ मिल जाती थी कि 'युग-युग जिओ' परंतु आजकल ऐसी दुआयें देने और लेने वालों का अकाल-सा पड़ गया है इसलिए काल किसी को भी, कभी भी आ दबोचता है। सार यह है कि काल के पंजे से छुड़ाने वाले प्यारे शिव बाबा की मीठी याद ही अकाल काल के पंजे से छुड़ा सकती है।

'ज्ञानामृत' मासिक पत्रिका तथा देश-विदेश में फैले ब्रह्माकुमारीज़ सेवाकेन्द्रों में दिये जाने वाले ज्ञान को समझकर, धारण करके जीवन में उतारने वाली हर आत्मा बहुत ही भाग्यशाली है। इस कार्य की तारीफ के लिए शब्द नहीं हैं। पवित्रता, सुख, शांति, आनंद, उत्साह देने वाले आपके इस कार्य को तेज़ गति से बढ़ाने के लिए और विश्व भर की आत्माओं तक पहुँचाने के लिए मेरी बहुत-बहुत शुभकामनायें

– किरण आहेर, नासिक (महा.)

मार्च 2009 अंक में 'गहन अंधकार में फूटी उजाले की किरण' अनुभव पढ़ने से यह जानकारी मिली कि जब एक रास्ता बंद होता है तो परमात्मा दूसरा रास्ता खोल देता है। इसे पढ़कर मुझे बहुत हिम्मत मिली। परमपिता परमात्मा ने इस बुद्धिहीन बच्चे की आँखें खोल दी हैं। ज्ञानामृत पत्रिका अमृत से भी ज़्यादा प्यारी है।

– शंभु दयाल, अरैया (उ.प्र.)

मार्च 2009 के अंक में 'एक गाय और एक नारी' लेख में नारी की दुर्दशा का चित्रण बड़ा हृदयविदारक लगा। एक ओर नारी जहाँ इंजीनियर, वैज्ञानिक, डॉक्टर, सैनिक आदि क्षेत्रों में उच्च पदों पर आसीन होकर समाज, देश एवं विश्व में नारी जाति का सम्मान बढ़ा रही है वहीं कई गाँवों में पुत्र-प्राप्ति की रूढ़िवादी मनोवृत्ति ने नारी की ऐसी दुर्दशा कर रखी है। हम सबको जागृत होकर नारी का खोया सम्मान उसे फिर से देना होगा। इस दृष्टि में सराहनीय कार्य कर रहे प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय ने विश्व में नारी जाति का सम्मान बढ़ाया है और उसे एक देवी के रूप में सबके समक्ष उपस्थित किया है। हमें भी ब्रह्माकुमारी बहनों के साथ कदम से कदम मिलाकर चलना है। परमात्मा ने स्वर्णिम संसार बनाने का कार्य जो उन्हें सौंपा है, हमें उसमें मददगार बनना है।

– ब्रह्माकुमार कालूराम, टोंक

क्रोधी आत्मा परवश है, ऐसी परवश आत्मा को रहम के शीतल जल द्वारा शान्त कर दो, यही आप वरदानी आत्मा का कर्त्तव्य है।

सर्वोच्च सुधारक : भगवान

• ब्रह्माकुमार नाथूराम, भिण्ड (भोपाल)

मैं भोलेनाथ बाबा की भक्ति करता था। लगातार 10 वर्षों से व्रत, शिव चालीसा, पूजा-पाठ, आरती आदि करता आ रहा था। शादी हुई तो पत्नी से अनबन रहने लगी। संस्कारों का मिलन नहीं हुआ। एक दिन दुर्घटना में मेरा पैर टूट गया। मन में विचार आया कि पत्नी ने तो दिल तोड़ा और दिल जोड़ने के लिए भगवान, मैं आपके पास आया तो आपने मेरी टांग तोड़ दी (मेरी अज्ञानता की पराकाष्ठा ही तो थी यह, जो मैं अपने कर्मों की गुह्य गति तो समझा नहीं और उस परम निर्दोष को दोषी मान कुछ का कुछ कहता रहा। यह ठीक है कि अपने पिछले कर्म मनुष्य को दिखाई नहीं देते इस कारण वह अपने कर्मों का दोष नहीं मान पाता परंतु दिखाई तो भगवान भी नहीं देता और उसके द्वारा ही टांग तोड़ी गई इसका कोई प्रमाण भी हमारे पास नहीं होता, फिर भी हम अपने को ढ़ककर, दोषों के लिए उसे ज़िम्मेदार ठहराने में ज़रा भी नहीं हिचकिचाते) इसके बाद मैंने पूजा-पाठ आदि सब बंद कर दिए, मैं आसुरी प्रवृत्ति का हो गया और दुनिया के बुरे से बुरे काम करने चालू कर दिए। खान-पान भी अशुद्ध हो गया। जीवन में लूटमार, लड़ाई-झगड़ा मेरे लिये आम बात बन गई। माँस, शराब, जुआ, बीड़ी, सिगरेट, तंबाकू आदि सब चालू हो गया। लोग मुझसे डरने लगे। अब हमारी एक टीम बन गई जिसमें मैं सबका दादा था। कई बार जेल भी जाना होता रहा, जीवन नर्क के समान हो गया। दस-पंद्रह केस भी लग गए जिस कारण सड़क पर चलना भी मुश्किल हो गया। रात-दिन गलियों में भटकता था। कोई कुछ कहता तो तुरंत ही उसे ठोक-पीट देता था। बाज़ार से हफ़्ता लेना मेरा पेशा था। व्यसनी-विकारी होने के कारण मेरे सोचने-समझने की शक्ति क्षीण हो चुकी थी। घर वाले भी बहुत परेशान रहने लगे क्योंकि रात-दिन पुलिस आती रहती थी।

अपने जीवन से घृणा

एक दिन मैं बहुत दु:खी था, अन्तरात्मा से बातें कर रहा था, मुझे जीवन से घृणा आने लगी। सुधार का कोई रास्ता सूझ नहीं रहा था। आत्मग्लानि की मन:स्थिति में मैंने फिर एक बहुत बड़ा केस कर दिया। उसमें मेरे सारे रिश्तेदार और घरवाले पकड़े गये। मैंने सोचा, ऐसी जिंदगी से तो मर जाना ही ठीक है। मैंने भक्तिमार्ग में लोगों को कहते सुना था कि सब कुछ भगवान करवाता है, उसके बिना पत्ता भी नहीं हिलता। परंतु हम तो, पत्तों को छोड़िए, अपने कुकर्मों से सारे समाज के लोगों को हिला देते थे। कुकर्म करके अहंकार के नशे में मैं कहता था, यदि भगवान

है तो वह रोकता क्यों नहीं, भगवान है ही नहीं, वह जो नहीं चाहता उसे करने से रोके ना, वह पत्थर की मूरत के अलावा कुछ नहीं है।

फूलों का रास्ता चुन लिया

अचानक भगवान ने चमत्कार दिखा दिया। मोहल्ले का एक लड़का मेरे पास आया और बोला, दादा, अपने मोहल्ले में रेखा नाम की एक बहू आई है, ब्रह्माकुमारी आश्रम में जाती है, बहुत अच्छा ज्ञान सुनाती है। मन तो दु:खी था ही, अंदर में एक लहर उठी और अपने आप पैर चल दिये उसकी ओर। बहन का चेहरा देखकर ही मेरे दु:ख-दर्द कुछ हल्के हो गये, दिल को राहत मिल गई। उन्होंने बहुत ही मीठी भाषा में मेरी जीवन-कहानी सुनी। फिर एक प्रश्न पूछा, आप किस रास्ते पर चलना पसंद करेंगे, एक है कांटों का, दूसरा है फूलों का? मैंने कहा, कांटों के रास्ते पर चलकर मेरी यह दुर्दशा हुई है, अब तो फूलों के रास्ते पर चलना चाहता हूँ। उसने फिर पूछा, जीवन में सुख-शांति चाहिये या अशांति ही

पसंद करेंगे? मैंने कहा, सुख-शांति। रेखा बहन ने कहा, आपको मेरी बात माननी पड़ेगी। मैंने खुशी से कहा, मैं मानूँगा। अगले दिन वह मुझे आश्रम ले गई, सतगुरुवार का दिन था। देवी समान बहन जी संदली पर बैठ मुरली सुना रही थी। अनमोल वचन समझने में तो कम आये लेकिन दिल को छू रहे थे। मन शांत होने लगा। जिस प्रकार रोशनी की एक किरण से गहन अंधकार छंटने लगता है, उसी प्रकार, सत्य ज्ञान के चंद शब्दों से ही मुझे राहत मिल गई। असरकारक औषधि की तरह, चंद घड़ियों की मुलाकात ने ही मुझ पर प्रभाव डाल दिया। ऐसा लगा कि सारी मुसीबतें व परेशानियाँ दूर हो गई हैं, मेरे अंदर से बुराइयाँ जाने लगीं। मैंने उसी दिन से प्रण ले लिया कि आज से जीवन में कोई व्यसन व बुराई नहीं रहने दूँगा। फिर आश्रम जाने लगा और धीरे-धीरे लगन बढ़ती गई। मेरे अंदर से बुराइयाँ भाग गईं। मेरा परिवर्तन देख मोहल्लेवासी व अन्य सभी आश्चर्य खाने लगे। प्रेरित होकर अन्य कई लोग भी आश्रम में जाने लगे।

बाबा पर है पूरा भरोसा

अब मेरे अंदर कोई भी व्यसन नहीं रहा है। पूर्ण तरीके से शिवबाबा की सेवा में लग गया हूँ। अब मैं बाबा को बहुत चाहता हूँ और बाबा भी मुझे बहुत चाहते हैं। मुझे बाबा पर पूरा भरोसा है। बाबा मेरे सारे काम संवार देते हैं। मेरे अनुभव का निचोड़ यही है कि प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के माध्यम से स्वयं निराकार परमात्मा शिव ही, असुर को मानव और मानव को देवता बना रहे हैं। आप भी लाभ उठा लीजिये। भगवान ही सर्वोच्च सुधारक हैं, वे ही संसार का सुधार करने के लिए अवतरित हो चुके हैं। ❖

कभी किसी का बुरा न चाहें

रोज़ अपना सर झुकाकर माँगता बस यही दुआ
भूल से भी इस ज़ुबां से बद्दुआ निकले नहीं।

हम इस बात पर विचार करें कि क्या हमारे चाहने मात्र से ही किसी का बुरा हो सकता है? अगर ऐसा संभव होता तो संसार में कोई दिखाई ही नहीं देता क्योंकि लोग अपने दुश्मनों को बद्दुआ से खत्म कर देते। अच्छा हुआ कि हर व्यक्ति की दुराशीष फलीभूत नहीं होती।

जब हमारे चाहने से किसी का बुरा नहीं हो सकता तो हम किसी का बुरा क्यों चाहें? बुरा चाहने से स्वयं के मन की शांति नष्ट हो जाती है। ईर्ष्या का ज़हर शरीर को क्षीण करता है। जीवन का आनन्द मिट जाता है। व्यक्ति रात-दिन मन ही मन खीजता रहता है। ईर्ष्या से मिलती है अशांति और जलन। स्वभाव में आ जाता है चिड़चिड़ापन। लोगों की दृष्टि में गिर जाता है ईर्ष्यालु व्यक्ति। फिर ईर्ष्या का ज़हर दिल में क्यों रखें?

जीवन में प्रसन्नता आती है सबके हित साधन से, सबके प्रति मंगल-कामना करने से, सब पर अपना प्यार लुटाने से। एक बार सर्वथा ईर्ष्या-शून्य होकर देखें। सबके विकास में खुश होकर देखें। सबको अपना मानकर देखें। इससे ऐसी तृप्ति मिलेगी जो रोम-रोम को आनन्दित कर देगी। पैरों में जगेगी उमंग की तरंग और आँखों के सामने खिलेंगे शीतलता प्रदान करने वाले दृश्यों के फूल। सारे संसार की खुशी हमारी झोली में आ गिरेगी। रंक से राजा बन जायेंगे हम। लघु से विराट हो जायेगा हमारा व्यक्तित्व। श्रद्धा के सुमन चढ़ाये जायेंगे हमारे ऊपर।

एक बार, सिर्फ एक बार हृदय को पूर्णतया शुद्ध कर लें। किसी के प्रति दूरी का भाव न रखें। फिर देखेंगे संसार का वह रूप जो अत्यंत उज्ज्वल है। वह हमारे जीवन को खुशियों से भर देगा। दूरी के भाव ने ही हमें दीन-हीन बना रखा है। अपनत्व जगते ही हम शुद्ध-बुद्ध हो जायेंगे।

संकल्प लें कि हमारे मुख से किसी के लिए बद्दुआ नहीं निकले। हम अपकार करने वालों का भी उपकार करेंगे। अगर यह हो गया तो जीवन सुख-शांतिमय हो जायेगा और हम हर समय ईश्वरीय मस्ती में डूबे रहेंगे। ❖

तीन पैर पृथ्वी बाबा ने स्वीकार कर ली

• ब्रह्माकुमारी कुमुद जैस्वाल, तुमसर (महा.)

इस समय मेरी उम्र 73 वर्ष है। बाल्यकाल से ही मुझे भगवान को पाने की इच्छा थी। मैं अपने माता-पिता के साथ मंदिर और सत्संगों में जाया करती थी। शादी हुई तो पति मंदिर, सत्संग, पूजा, व्रत आदि का विरोध करने लगे लेकिन सिनेमा जाने की छूट थी (कैसी पतित मानसिकता है समाज की! पत्नी पूजा, व्रत, नेम करे तो रोको और सिनेमा जाए तो जाने दो)। मुझे भगवान को पाने की इतनी लालसा थी कि मैं सिनेमा जाने के बहाने मंदिरों में जाया करती थी। पता पड़ने पर घर में बड़ा हंगामा होता था। इस प्रकार जीवन बहुत संघर्षमय था।

सन् 1988 में अचानक हार्टफेल के कारण पति का देहान्त हो गया। जीवन अधिक चिंताग्रस्त हो गया। मन की शांति के लिए बेटे ने सभी तीर्थस्थानों की यात्रा करायी पर शांति नहीं मिली। मैं कैंसर से पीड़ित हो गई। ऑपरेशन के बाद आराम के लिए अपने भाई के घर कानपुर गई थी। मुझे चिंतित और अशांत देख लौकिक भाई मुझे ब्रह्माकुमारी आश्रम पर लेकर गया। ईश्वरीय ज्ञान सुनकर मुझे बहुत शांति मिली। मुझे जीने की चाह और राह मिल गई। मैंने अपनी माताजी के साथ सात दिन का कोर्स किया। मन में दृढ़ संकल्प आया कि मैं अपने तुमसर शहर में सेंटर बनवाऊँगी। यह संकल्प मैंने घर में आकर अपने लौकिक बेटे को सुनाया। बेटे-बहू इतने आज्ञाकारी और सहयोगी हैं कि आज तक मेरी हर इच्छा को सिरमाथे रखते आए हैं। बेटे ने तुरंत हाँ कहकर शिव बाबा को ज़मीन दी तथा बाबा ने भी तीन पैर पृथ्वी स्वीकार कर ली जहाँ पर सब भाई-बहनों ने मिलकर भवन तैयार करवा दिया। बेटे को व्यापार का कुछ भी ज्ञान नहीं था लेकिन प्यारे बाबा ने उसको लोहे-सीमेंट का तुमसर शहर का नंबरवन कुशल व्यापारी बना दिया। आदरणीया दादी रतनमोहिनी जी के करकमलों से दुकान का उद्घाटन हुआ। बेटा भी सदा बाबा की छत्रछाया का अनुभव करता है। बहुत बड़ा लौकिक परिवार है। सबको बाबा का परिचय मिला है। सभी बहुत सहयोगी हैं। ज्ञान का बीज अविनाशी होने के कारण सहयोगी से योगी ज़रूर बनेंगे ही।

ज्ञान में आने से पहले मैं सीढ़ी से गिरने के कारण ठीक से लिख नहीं पाती थी। जब पहली बार मधुबन गई, वहाँ भी गिरी थी लेकिन ऐसा अनुभव हुआ जैसे मुझे बाबा ने अपनी बाँहों में उठा लिया। आज भी वह क्षण याद आने से रोमांचित हो जाती हूँ। मुझे ईश्वरीय विद्यार्थी जीवन का इतना नशा है कि शारीरिक उम्र 73 वर्ष होने

के बावजूद भी मैं मुरली मिस नहीं करती और बड़ी आसानी से मुरली लिखती भी हूँ।

हर साल यही सोचती हूँ कि अगले साल मधुबन नहीं जा पाऊँगी क्योंकि शरीर भी थकता जा रहा है लेकिन बाबा का सीज़न आते ही तंदुरुस्त होकर, बाबा से मिलकर झोली भरकर आती हूँ। इस साल तो बाबा से बहुत शक्तिशाली दृष्टि मिली, मैं धन्य-धन्य हो गई। किन शब्दों में बाबा का शुक्रिया अदा करूँ। प्यारे बाबा ने ज़िंदगी ही बदल दी। हरे-भरे हँसते-खेलते परिवार में मैं बहुत सुख का अनुभव करती हूँ। घर में भी बेटे ने छोटा-सा बाबा का कमरा बना दिया है। अब घर स्वर्ग-समान बन गया है। दिल यही कहता है, 'पाना था सो पा लिया', 'धन्य-धन्य हो गये, हम प्रभु को पा गये'।

❖

क्यों कलंकित हुए पवित्र रिश्ते?

• ब्रह्माकुमार हंसराज गुप्ता, दिल्ली

जो भाई अपनी बहन से उसकी रक्षा का वादा कर राखी बँधवाता है, वही भाई दरिंदा बन अपनी बहन को ही हवस का शिकार बना पवित्र रिश्ते को तार-तार कर देता है। जो अध्यापक अपनी छात्रा को श्रेष्ठ बनाने का स्वप्न देखता है वही अध्यापक राक्षस बन अपनी छात्रा के विश्वास को कुचल देता है। जो बाप अपनी बेटी को लाड़-प्यार से पालता है, वही बाप दैत्य बन बाप-बेटी के रिश्ते को कलंकित कर देता है। आजकल ऐसे समाचार हमें पढ़ने-सुनने और देखने को मिलते हैं। समाचारों में तो कुछेक घटनाएँ ही आती हैं। न जाने इस प्रकार की कितनी ही घटनाएँ घटती हैं जो समाचार नहीं बन पातीं। जिन शर्मनाक घटनाओं की हम कल्पना भी नहीं कर सकते थे, वे आज दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही हैं। इन घटनाओं को रोकने में कोई कानून भी कारगर सिद्ध नहीं हो पा रहा है। और तो और कानून के रक्षक ही ऐसी घटनाओं को अंजाम दे डालते हैं। देवता स्वरूप आदमी भी दैत्य रूप धारण कर लेता है। इन शर्मनाक घटनाओं को सुनकर-देखकर, जानकर तो ऐसा लगता है कि शास्त्रों में अकासुर, बकासुर, महिषासुर, रक्तबीज इत्यादि राक्षसों का जो वर्णन है, वो इसी समय के मानव-राक्षसों का ही वर्णन है। राक्षसों की कोई अलग से जाति या रूप नहीं होता। मानव ही अपने दुष्कर्मों द्वारा राक्षस का रूप धारण कर लेता है।

मानव कैसे बन जाता है दानव (राक्षस)?

जिस प्रकार एक कंप्यूटर में कई सॉफ्टवेयर भरे होते हैं, जिस भी सॉफ्टवेयर पर क्लिक करते हैं वही खुल जाता है। उसी प्रकार मनुष्य के दिमाग रूपी कंप्यूटर में भी तीन स्वरूपों के सॉफ्टवेयर भरे हुए हैं। दैवी, मानवी और दानवी (राक्षसी)। मनुष्य जिस भी वातावरण में रहता है व जिस प्रकार के दृश्य देखता है उसके दिमाग का वैसा ही सॉफ्टवेयर खुलता जाता है। वातावरण में रहना व दृश्यों को देखना एक तरह से दिमागी कंप्यूटर के सॉफ्टवेयर को क्लिक करना है। अगर मनुष्य दैवी वातावरण में रहता है और दैवी दृश्य देखता है तो देवता बन जाता है। मानवीय वातावरण में रहता है और मानवीय दृश्य देखता है तो मानव बन जाता है। दानवी वातावरण में रहता है और दानवी दृश्य देखता है तो दानव (राक्षस) बन जाता है।

कलंकित क्यों होता है भाई-बहन का पवित्र रिश्ता?

सुबह उठते ही एक भाई की दिनचर्या अखबार पढ़ने से शुरू होती है। उसे अखबार में नारी के शरीर की नुमाइश देखने को मिलती है और दूषित लेख पढ़ने को मिलते हैं। घर से बाहर जाता है तो वहाँ नारी के वस्त्र ऐसे देखने को मिलते हैं जो शरीर को ढकते कम हैं और दिखाते ज़्यादा हैं। बाज़ार में जगह-जगह विज्ञापन के रूप में नारी का शरीर परोसा हुआ मिलता है। मनोरंजन के नाम पर सिनेमा देखता है तो उसमें भी उसे उत्तेजक दृश्य देखने को मिलते हैं। टी.वी. खोलता है तो भी नारी के शरीर को इस तरह दिखाया जाता है जैसे कि शरीर न हो, कोई भोग्य पदार्थ हो। इसके साथ-साथ मादक द्रव्यों की आसानी से उपलब्धता तो 'एक करेला दूसरा नीम चढ़ा' वाली कहावत को चरितार्थ करती है। जिस भाई को सारा दिन नारी का शरीर परोसा गया हो और साथ में मादक पदार्थों ने आग में घी का काम किया हो तो जब घर पर आकर वह बहन को देखेगा तो उसे बहन दिखाई नहीं देगी बल्कि बाज़ार में परोसा गया नारी का शरीर दिखाई देगा। इन कारणों से हवस रूपी शैतान भाई-बहन के पवित्र रिश्ते को कलंकित कर देता है। इसी प्रकार अध्यापक का, बाप का व अन्य पवित्र रिश्ते कलंकित होते हैं।

ज़िम्मेवार कौन?

सृष्टि ड्रामा के रचयिता परमात्मा

शिव ने जब इस सृष्टि-नाटक का प्रारंभ किया तब उसने नारी के गुण और योग्यता के आधार पर उसके सम्मान को ऊँचा रखा था। तभी तो सतयुग में पहले श्री लक्ष्मी, फिर श्री नारायण और त्रेता में पहले श्री सीता, फिर श्री राम लिखा जाता रहा है। त्रेतायुग के अंत तक नारी और नर दोनों पवित्र होने के कारण देवी-देवता जाने जाते थे। द्वापर से जब वे ही देवी-देवता काम चिता पर बैठ अपवित्र हुए तब से नारी का सम्मान गिरने लगा। यह सम्मान गिरते-गिरते कलियुग में आकर इतना गिरा कि पुरुष-प्रधान समाज में नारी को बिल्कुल ही निम्न समझा जाने लगा। यहाँ तक कि पुरुष नारी को अपनी संपत्ति समझने की गलती करने लगा। भारत देश में नदियों को बहुत महत्त्व दिया जाता है। नदियों के नाम भी देवियों के नाम पर पड़े हैं जैसे गंगा, यमुना, सरस्वती, कृष्णा, कावेरी इत्यादि। ये नदियाँ मानव जाति का लालन-पालन करती हैं लेकिन जब इन्हीं नदियों में पानी अधिक छोड़ दिया जाता है तब ये नदियाँ सीमाएँ लांघ देती हैं और तबाही का मंजर पैदा कर देती हैं। उसी प्रकार पुरुष-प्रधान समाज ने भी नारी पर इतना दबाव बनाया कि नारी ने अपने सम्मान को पुन: पाने के लिए अपनी सभी मर्यादा रूपी सीमाएँ लांघ दीं और ग्लैमर (शरीर की नुमाइश) का सहारा लिया। जिस नारी का स्वरूप देवी सीता जैसा था अब उसी नारी ने अपना रूप सूर्पनखा राक्षसी जैसा बना लिया है। आज रिश्तों के कलंकित होने का जो मंज़र सामने आया है यह सब उसी का परिणाम है। **आज नारी, पुरुष समाज की बराबरी करने लगी है जबकि उसका सम्मान पुरुष समाज से ऊँचा था।** नारी ने पुरुष समाज की बराबरी कर स्वयं ही अपने सम्मान को नीचे गिराया है और आज नारी कहीं पर भी सुरक्षित नहीं है। कोई भी कानून या अन्य बल नारी की सुरक्षा नहीं कर पा रहा है। अपने सम्मान को ऊँचा बनाकर ही नारी स्वयं ही अपनी रक्षा कर सकती है।

कैसे महकेगी पवित्र रिश्तों की बगिया फिर से?

शास्त्रों में वर्णन है कि शक्ति रूप देवियों ने ही मानव जाति व स्वयं की अनेक प्रकार के असुरों से सुरक्षा की है। यह वर्णन भी इसी समय का ही है। अकासुर, बकासुर, महिषासुर, रक्तबीज इत्यादि राक्षस कोई और नहीं बल्कि काम, क्रोध, लोभ, अहंकार, ग्लैमर, नाम, मान, शान इत्यादि ही थे जिनमें आज की नारी पूरी तरह से डूब चुकी है या डूबने को तैयार है। नारी द्वारा इन राक्षसों से स्वयं की रक्षा करना ही शक्ति रूप देवी बनना है। इसी से ही समस्त मानव जाति का कल्याण होना है। जो भी नारी काम, क्रोध, लोभ, अहंकार, ग्लैमर, मान, शान को त्याग पवित्रता, स्नेह, त्याग, नम्रता, सादगी रूपी स्वमान को अपना लेगी वही शक्ति रूप देवी होने का गौरव हासिल करेगी। जिस दिन भारत की समस्त नारियाँ इस रूप में आ जायेंगी तो हमारे पवित्र रिश्तों की बगिया फिर से स्वत: ही महक उठेगी। ❖

बाँटो खुशियों की सौगात

डॉ. राजेन्द्र नाथ शर्मा
अम्बाला कैंट

कायम रखो दिल में धैर्य, सुकून
चढ़ न जाये स्वार्थ का जुनून
ईर्ष्या-द्वेष हैं मीठे ज़हर
बचके रहना आठों पहर
मन में संजो लो मीठे सपने
अजनबी बन जाएंगे अपने
घृणा की काट दो बेल
बना रहेगा तालमेल
सच्ची धारणा और
पक्का विश्वास
उन्नति के सोपान हैं खास
मत दिखाओ झूठी औकात
सब में बाँटो खुशियों की सौगात
न युवा बागी, न हो संगत दागी
अपनी बना लो ऐसी पहचान
सबकी उन्नति में अपनी उन्नति
करते रहो इसी का गुणगान
कण-कण में आनन्द अपार
हर दिन रहेगी बसन्त बहार

विश्व तंबाकू निषेध दिवस पर विशेष

व्यसन – मौत की शहज़ादी को निमंत्रण

• ब्रह्माकुमारी उर्मिला, शान्तिवन

किसी ने ठीक कहा है, 'आदत वह जबरदस्त रस्सा है जिसे हम प्रतिदिन अपने हाथों से बांटते हैं और अन्त में हम उसे तोड़ नहीं पाते हैं।' जैसे मकड़ी अपने ही जाल में फंसकर दम तोड़ देती है; किसी भी बुरी आदत, व्यसन, व्यभिचार, जुआ, नशेबाज़ी, सिनेमा आदि का गुलाम इंसान भी इनकी गुलामी करते-करते तंग आकर समय से पहले दम तोड़ देता है।

विश्व की अति प्राचीन 21 संस्कृतियों में से 19 संस्कृतियों का विनाश शराब के कारण हुआ। बहुत दूर क्यों जाएं, मुगलों ने अपना विशाल साम्राज्य, भारत के अनेक राजपूत राजाओं ने भी अपने राज्य, शराबखोरी में गंवा दिए। रोम, मिश्र तथा यूनान के शक्तिशाली राज्य शराबखोरी के कारण बरबाद हो गए। पूरे विश्व के विनाश के लिए एक शराब ही काफी है। कोई भी मानव, माता के गर्भ से, किसी भी व्यसन को मुँह से लगाए हुए नहीं जन्मता है। जब जन्म और बचपन व्यसनों के बिना गुज़र सकता है तो जीवन क्यों नहीं? व्यक्ति का बड़प्पन तो उसकी विकसित बुद्धि द्वारा दर्शाया जाता है, व्यसन बड़प्पन का नहीं वरन् अविकसित विवेक तथा क्षुद्र प्रकृति के प्रतीक होते हैं।

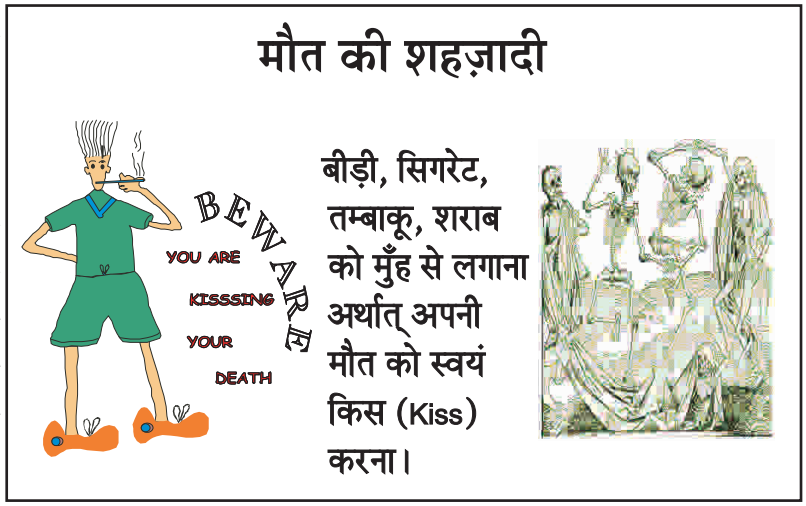

व्यसन परम्परागत नहीं हैं

कई लोग मानते हैं कि भारत में व्यसन परम्परागत तरीके से चलते आए हैं परन्तु परम्परा का अर्थ क्या है? भारत की प्राचीन परम्परा या संस्कृति तो दैवी थी। देवी-देवताओं में, सतयुग-त्रेतायुग में किसी भी प्रकार के व्यसनों का प्रचलन नहीं था तभी तो उनकी निरोगी काया, कंचन काया का वर्णन आता है। रोग, बुढ़ापे और अकालमृत्यु पर देवी-देवता विजयी थे, यह बात ही सिद्ध करती है कि तन, मन को नुकसान पहुँचाने वाली किसी भी आदत से वे पूरी तरह अनभिज्ञ थे। भक्ति मार्ग के ग्रन्थ रामायण में वर्णन है कि हनुमान ने देखा कि रावण के सभी असुर सुरा और सुन्दरी के नशे में चूर हैं। इस नशे का परिणाम क्या निकला? सर्वनाश! रावण की लंका आज के संसार का ही पौराणिक वर्णन है। रावण राज्य अर्थात् विकारों और व्यसनों का राज्य, उसके नाश के बाद ही रामराज्य स्थापन होता है। इतिहास के प्राचीन पन्नों पर, विदेशी पर्यटकों द्वारा इस देश का जो वर्णन अंकित है उसमें भी कहा गया है कि राज्य में कहीं भी शराब या मांस का प्रचलन नहीं होता था। ऐसी चीज़ों का

सेवन करने वाले इक्का-दुक्का, जाति विशेष के लोग, शहर से बाहर दूर बस्ती में रहते थे। सभ्य समाज से वे कटे हुए रहते थे।

भारत में विदेशी संस्कृतियों के आगमन के बाद अर्थात् मुसलमानों और अंग्रेज़ों के आधिपत्य के बाद यहाँ की संस्कृति में अखाद्य पदार्थों का प्रचलन बढ़ गया। मुसलमानों के समय लोगों में चोरी-छिपे शराब पीने और बेचने का प्रचलन हो गया था। जैसा राजा, वैसा ही प्रजा भी करने लगी थी। रामधारी सिंह दिनकर ने अपनी पुस्तक 'संस्कृति के चार अध्याय' में लिखा है कि ''पहले इस देश के लोग शराब नहीं पीते थे। जब अंग्रेज़ों ने आबकारी विभाग चलाया तब शराब की लत बहुतों को लग गई।'' इसी पुस्तक में आगे वे लिखते हैं, ''अंग्रेज़ी शिक्षा प्राप्त करने वाले युवकों ने भी मदिरा-पान करना प्रारम्भ कर दिया।

नारियों द्वारा सात्विक चीज़ों से स्वागत

पहले समाज में नारी का स्थान ऊँचा था, स्वागत-सत्कार में घर की महिला की मुख्य भूमिका रहती थी। घर में आने वाले मेहमानों का सत्कार स्नेहभरी मुस्कान के साथ तिलक, मिश्री, इलायची, बादाम, केसर, चन्दन आदि से होता था। परन्तु धीरे-धीरे नारी को पर्दे के पीछे धकेलकर समाज का आधिपत्य पुरुषों के हाथों में आ गया। अब स्वागत-सत्कार की वो सात्विक विधि और स्वागत की वो कोमल और सात्विक चीज़ें भी गायब हो गईं। पुरुषों द्वारा स्वागत के रूप में हुक्का, गड़गड़ा, पान, तम्बाकू आदि का प्रयोग होने लगा। कहीं शराब भी प्रयोग में लाई जाने लगी। ज्यों-ज्यों तमोप्रधानता बढ़ी त्यों-त्यों इन तमोप्रधान वस्तुओं को ही मान-मर्यादा का प्रतीक माना जाने लगा।

काली कामरिया पर चढ़े न दूजो रंग

आज मानव का मनोबल इतना अधिक गिर चुका है कि मानव के रूप में किए जाने योग्य कर्त्तव्यों और खान-पान के सम्बन्ध में वह पूरी तरह भ्रमित है। समाज की हर व्यवस्था के बिगड़ने और संवरने के पीछे व्यक्ति का ही हाथ होता है। व्यक्ति के मन की इस गिरावट की अति का कारण क्या है? बड़ा आश्चर्य लगता है कि भोजन में किसी छोटे-से बाल या तिनके या कंकर के आ जाने पर थाली फेंक देने वाला व्यक्ति, भोजन की शुद्धता का भाषण झाड़ने वाला व्यक्ति, घर में भोजन बनाने वाली माता, बहन, पत्नी या अन्य के प्रति, भोजन के बर्तनों या पानी या खाद्य में थोड़ी भी अशुद्धि देखकर क्रूरता या हिंसा पर उतारू हो जाने वाला व्यक्ति एक बार भी अपने अन्दर झांककर नहीं देखता कि मैं सारे दिन में जो बीड़ी, गुटखा, तम्बाकू, शराब आदि खाता-पीता हूँ वे तो महाअशुद्ध हैं। उस अशुद्धि की तरफ से विवेक की आँखें पूरी तरह बन्द हैं। जीवन को बरबाद करने वाली उस अशुद्धि पर तो पैसे खर्च किए जाते हैं, उस अशुद्धि को देने वाले, पिला देने वाले, खिला देने वाले व्यक्ति तो अच्छे लगते हैं और घर में ज़रा-सी भोजन में कुछ ऊपर-नीचे बात होने पर कोहराम खड़ा किया जाता है। क्या उसे इतनी भी समझ नहीं है कि जिसे गधे भी नहीं खाना चाहते, उस चीज़ को खाकर, पीकर मैं अपने मन, तन को इतना तो अशुद्ध कर चुका हूँ कि अब यह और ज्यादा अशुद्ध क्या होगा? इस काली कामरिया पर अब और कोई रंग चढ़ ही नहीं सकता है। एक व्यक्ति की नई गाड़ी आई। दोस्तों ने एक के ऊपर एक कई प्रकार की शराब पिला दी। बेचारे के मन का सन्तुलन खो गया। घर में आकर मिट्टी का तेल छिड़क कर अपने को आपे ही आग लगा ली। कमरे का सामान भी जल गया और खुद भी जल कर मर गया। भोजन में यदि दो चीज़ें मिलाकर कोई खिला दे तो कहेंगे, मुझे मारने की पड़ी है क्या? और शराब चाहे कोई कितनी भी प्रकार की उल्टी-सीधी मिलाकर पिला दे, उसका कोई डर नहीं? ऐसे ज्ञान-

नयनहीन क्यों हो गए इन्सान? मानव की ऐसी उल्टी चाल को देखकर कबीर जी होते तो क्या कहते? यक्ष-युधिष्ठिर के आधुनिक संवाद का सबसे बड़ा आश्चर्य यही है कि प्रतिदिन अपने चारों ओर लाखों व्यक्तियों को व्यसनों से मरते, घुटते, तड़पते देखकर भी व्यक्ति यही सोचता है कि शायद मेरे साथ ऐसा नहीं होगा, मैं कितने भी व्यसन कर लूँ, मैं बचा ही रहूँगा। परन्तु जैसे मौत को नहीं टाला जा सकता, वैसे ही व्यसन करके व्यसनों से होने वाली हानियों और बरबादियों को भी नहीं टाला जा सकता।

व्यसन अर्थात् स्वयं को निचोड़ना

व्यसनी व्यक्ति की हालत उस अनाथ बच्चे की तरह हो जाती है जो गली में पड़ी हर चीज़ को उठाकर मुंह में डाल लेता है चाहे वह कंकर हो, कोयला हो, मिट्टी हो या पत्थर। आज का मानव भी बेसहारा है, लावारिस है। उसका नाथ, सारे जगत का नाथ परमात्मा शिव है, पर उससे उसकी ना पहचान है, ना नाता है। ना उसके प्रेम की अनुभूति है, ना उससे कोई प्राप्ति का अनुभव है। ना जीवन का कोई लक्ष्य है, ना कर्त्तव्य की पहचान है। ना अपने पर विश्वास है और ना परमात्मा का पुत्र होने के अपने भाग्य पर कोई गर्व है इसलिए वह अन्धा-सा होकर भोगने में लगा है। वह सारे संसार को, हर पदार्थ को भोग लेना चाहता है, उसको निचोड़ लेना चाहता है पर यह भूल जाता है कि इस प्रयास में वह स्वयं भोगा जा रहा है और स्वयं ही निचोड़ा जा रहा है।

व्यसनी - स्वयं का शत्रु

जैसे उल्लू को रात में दिखता है, दिन में नहीं। किसी भी व्यसन के अधीन व्यक्ति की स्थिति उल्लू से अच्छी नहीं होती क्योंकि, शुभचिन्तक उसे दुश्मन नज़र आता है और दुश्मन उसे मित्र नज़र आता है। संसार के इतिहास में किसी के कितने भी कड़े दुश्मन रहे हों पर व्यसनी स्वयं अपने ही शरीर का कड़े से कड़ा दुश्मन बन जाता है। वह शरीर को और मुख को गटर और कूड़े के डब्बे से ज़्यादा अच्छा नहीं समझता तभी तो वो सब चीज़ें, जो इनमें डाली जाती हैं, अपने मुँह में शौक से डालता है। लोग उसकी इस नादानी पर हंसते हैं पर वह किसी बड़े हादसे की खबर कानों में पड़ने तक सब बातों से बेखबर हो अपने कार्य में लगा रहता है।

दोस्ती की आड़ में दुश्मनी

एक वो समय होता है जब किसी निर्व्यसनी को व्यसनी बनाना होता है। दोस्तों का दल पता नहीं कहाँ से प्रकट हो जाता है और बिन पैसे सब प्रकार का व्यसनी ज़हर उसके आगे परोस दिया जाता है। अपनी कसमें, उसकी कसमें, दोस्ती की कसमें दे-देकर उसे दबोच लिया जाता है परन्तु यदि हो जाए वो बीमार और पड़ जाए ज़रूरत इलाज की तो इन तथाकथित दोस्तों का ना पता मिलता है, ना ठिकाना। हाल-चाल पूछना, मदद करना, सहानुभूति दिखाना, ये सब तो बहुत दूर की बातें हैं। वे तो वास्तव में दोस्ती का लेबल लगाए हुए दुश्मन थे, जो अपनी दुश्मनी निकालकर चलते बने। अब उनको कोसने से क्या लाभ? कोसना तो स्वयं को चाहिए कि उनके कहने से वह स्वयं, स्वयं का दुश्मन क्यों बन बैठा?

मौत की शहज़ादी को निमन्त्रण

पुराने जमाने में लोग मरने के लिए सिन्दूर को धीमे ज़हर के रूप में इस्तेमाल करते थे या कई हीरे को भी चाट लिया करते थे। मरने के आधुनिक तरीके अब दूसरे हैं। अब तो लोग सिगरेट, बीड़ी, गुटखा, शराब आदि को चूसते, चाटते और चबाते रहते हैं। सिगरेट को होंठों से लगाना अपनी मौत को चूमने के बराबर ही तो है। जितनी बार आप व्यसनों को मुँह से लगाते हैं, मृत्यु रूपी शहज़ादी आकर्षित हो आपके और अधिक नज़दीक चली आती है। जब यह दूरी पूरी तरह खत्म हो जाएगी तो वह आपसे लिपट जायेगी, कल्पना तो कीजिए, कैसा होगा वो दिन?

❖

श्रेष्ठ सौन्दर्य प्रसाधन : प्रभु स्मृति

• ब्रह्माकुमार योगेश भावसार, खरगोन (म.प्र.)

रामराज्य अर्थात् सतयुग के बारे में सदियों से यही गायन चला आ रहा है –

दैहिक, दैविक, भौतिक तापा,
रामराज्य काहू नहीं व्यापा।

सतयुग में प्रकृति के पंच तत्व सतोप्रधान होते हैं। उनसे निर्मित काया भी सतोप्रधान, निरोगी एवं उसमें विराजमान आत्मा भी संपूर्ण पावन होती है। उन कंचन काया वाले, सोलह कला संपूर्ण देवताओं की तुलना आजकल के मनुष्यों से करना तो जैसे सूर्य को दीया दिखाने के समान है। कलियुग के तो हाल बेहाल हैं, यहाँ के फैशन के क्या कहने? चलिए करते हैं दर्शन, चौपट राजा की अंधेर नगरी के –

फैशन चप्पलों का

एक बार मैं अपने दोस्त की दुकान पर चप्पल लेने गया। वहाँ ससुराल पक्ष के लोग नई दुलहन के लिये चप्पल देखने आये और बोले, हमको फैशनेबल चप्पलें चाहिएँ। बड़ी नाज़ुक पर बड़ी फैशनेबल चप्पलें खरीदकर ले गए। बाद में मालूम पड़ा कि वे फैशनबल और नाज़ुक चप्पलें सात फेरे लेने तक भी दुलहन का साथ न निभा पाईं और टूट गईं। लड़की वाले नाराज़गी जताने लगे कि सस्ती चप्पलें उठा कर ले आये, जो पूरे फेरे भी नहीं लगा पाई। लड़के वाले भी बोलने लगे कि दुलहन को चलना ही नहीं सिखाया, चप्पल को क्यों दोष देते हो? बात बढ़ गई आखिर लड़के वालों को दूसरी चप्पल दिलानी पड़ी। इस सारी कहानी का सार यही है कि बाहरी सौंदर्य बीच राह में धोखा देता है। भीतर का सौंदर्य ही अविनाशी साथ निभाता है। ब्रिटेन में जारी एक ताजा रिपोर्ट के अनुसार ऊँची एड़ी के सैंडिल से करीब 20,000 दुर्घटनायें प्रतिवर्ष घटित हो रही हैं। 'दर्द के मारे परेशान फिर भी ऊँची हील के जूते-चप्पल पहनना हमारी शान' इसके स्थान पर अब 'पहनने में आसान, पैर को दे आराम' यह नारा बहनों को अपना लेना चाहिए।

परिणाम टैटू का

आजकल टैटू के प्रति भी लोगों की दीवानगी बढ़ती जा रही है। हाथ में गुदवाना तो पुराने समय से चला आ रहा है किंतु शरीर के समस्त भागों में गुदवाने का फैशन भी आजकल बड़ा निराला है। यूरोपियन कमीशन के अनुसार, टैटू बनाने के दौरान इंजेक्शन द्वारा त्वचा के अंदर विषैले रसायन प्रवेश कराये जाते हैं। टैटू में इस्तेमाल किये जाने वाले अधिकतर रसायनों का इस्तेमाल कारखानों में ऑटोमोबाइल पेंट या लिखने की स्याही के रूप में किया जाता है। टैटू बनाने वालों को टैटू बनाते समय कानूनन दस्ताने पहनने होते हैं और संक्रमण रहित *(sterilized)* सूई का इस्तेमाल करना होता है लेकिन आमतौर पर ऐसा नहीं किया जाता। गंदी सूई के कारण एच.आई.वी., हेपेटाइटिस और अन्य जीवाणु संक्रमण होने का खतरा भी होता है। त्वचा कैंसर, सोराइसिस, टॉक्सिक शॉक सिन्ड्रोम या व्यवहार में परिवर्तन जैसी समस्याएं तो टैटू अवश्य पैदा कर देता है। सन् 2002 के अंत में यूरोप में टैटू के कारण दो लोगों की मृत्यु के मामले सामने आये थे। **मूल्यों को छोड़ बनावटी फैशन के मकड़जाल में उलझना उस सियार की तरह से है जो नीले रंग में डूबने के बाद खुद को सवा शेर समझता है। वास्तविक सुन्दरता है आत्मा के गुणों की सुन्दरता। टैटू तो केवल त्वचा को रंग-बिरंगा बना देता है परन्तु सद्गुण आत्मा को आकर्षक बनाते हैं। सद्गुणों की धारणा का न कोई साइड इफेक्ट है और न खर्च। इनकी धारणा से बिना मूल्य के ही आयु लंबी और काया निरोगी बन जाती है।**

बनावटी खुशबू है बड़ी हिंसक

खुशबू भला इस संसार में किसे पसंद नहीं परन्तु फैशन के दीवाने लोग तरह-तरह के परफ़्यूम आदि लगाकर महफ़िल में आर्टिफ़िशियल खुशबू फैलाने का ढोंग करते हैं। मन को

सुगंधित न कर तन की ही सुगंधी में उलझे रहते हैं। परफ़्यूम आदि बनाने वाले उद्योग निर्दोष जीवों की हत्या कर परफ़्यूम बनाते हैं। व्हेल की आंत से निकाले जाने वाले एक कीमती अवयव 'एम्बरग्रिस' का उपयोग परफ़्यूम में, चिपकाने वाले पदार्थ के रूप में होता है, इसे 1977 से समूचे विश्व द्वारा प्रतिबंधित किया गया है फिर भी नियमों को ताक पर रखकर व्हेल की हत्या जारी है। वही हाल कस्तूरी मृग परफ्यूम व्यापार से जुड़े उद्योगों का है। इसे बनाने के लिए प्रतिवर्ष लगभग 4000 व्यस्क नर हिरणों की हत्या कर दी जाती है। प्रतिबंध के बावजूद दस वर्षों में एशिया के सभी जंगली जीवों की संख्या में 80% की कमी हुई है। इन बेकसूर जानवरों एवं जीवों से स्वयं को सुगंधित करना तो हत्यारा ही कहलाना हुआ या फिर हत्याओं को प्रोत्साहित करने वाला।

एक बार दूलहे एवं दुलहन की महंगी पोशाकें देखकर मैंने पूछ ही लिया कि कितनी कीमत होगी इनकी। मुझे उत्तर मिला कि ये तो किराये की पोशाकें हैं। मैंने मन ही मन कहा, दिल अपना है और पोशाक पराई है। **वास्तव में, आज अल्पकालीन कलयुगी दिखावटी सुखों के कारण ही सब जगह धोखेबाजी, झूठ और फरेब है। आत्मा को न जान पंच तत्वों को संवारने वाला सुख तो छलावा है। सच्चा सुख तो आत्म-ज्ञान और परमात्म ज्ञान में है। इच्छाओं की न तो कोई लंबाई है, न चौड़ाई। ये तो बेहिसाब हैं। इच्छाओं के पीछे दौड़ना तो बिना लगाम के घोड़े पर बैठकर अपनी हड्डियाँ तुड़वाने के समान है। इसलिए 'सादा जीवन उच्च विचार' अपनाकर, जीवन की शक्ति को भोगों में व्यर्थ जाने से बचाना है। मानव भोगों को नहीं भोगता वरन् भोग ही मानव को भोग लेते हैं। इसलिए ज्ञान-दर्पण में अपनी कमी-कमज़ोरियों का अवलोकन कर उनको निकालते जाने से ही आत्मा का सच्चा सौंदर्य निखरेगा। परमात्मा पिता की याद और श्रेष्ठ कर्म ही वो सौंदर्य प्रसाधन हैं जिनसे आत्मा सोलह कला संपूर्ण और सर्वांग सुन्दर देवी-देवताओं के समान बन जाती है।** ❖

किसने किसको बाँधा?

ब्रह्माकुमार अशोक, अरेराज धाम, बिहार

एक व्यक्ति बैल को गले और नाक से बाँधकर लिए चला जा रहा था। दो लोगों ने उसे देखा। पहले ने कहा, देखो, इस व्यक्ति ने बेचारे बैल को बाँध रखा है। दूसरे ने कहा, नहीं, इस बेचारे व्यक्ति को बैल ने बाँध रखा है। दोनों में बहस शुरू हो गई। बैल और व्यक्ति तब तक पास आ चुके थे। बैल के मालिक ने कहा, मैंने बैल को बाँधा है, मैं इसका मालिक हूँ, इस जानवर की क्या बिसात जो यह मुझे बाँधे? इतने में एक अजूबा घटा। चिंघाड़ता हुआ एक जंगली हाथी उस ओर आ धमका। उसे देख बैल डर गया। वह इतना तेज दौड़ा, जो रस्सी पकड़े हुए उसका मालिक पीछे-पीछे घिसटता चला गया और लहू-लुहान हो गया। रस्सी हाथ से छूट गई और बैल का दूर-दूर तक भी अता-पता न चल सका।

सवाल यह है कि क्या किसी को बाँधने वाला स्वयं मुक्त रह सकता है? लोग धन-संपत्ति को बाँधकर, जोड़कर रखना चाहते हैं परंतु स्वयं भी उसके बंधन से कहाँ मुक्त रह पाते हैं। धन-संपत्ति उन्हें इतना बाँध लेती है कि वे मन की शान्ति तथा तन का स्वास्थ्य भी खो देते हैं। **हाँ, एक बंधन ऐसा है जिसमें बँधकर भी मानव पूर्ण मुक्त रह सकता है। इसे बंधन न कहकर संबंध कहना ज़्यादा उचित होगा। यह है आत्मा और परमात्मा का प्यार भरा संबंध। इस संबंध को जोड़कर मानव एक जन्म के नहीं वरन् अनेक जन्मों के पाप, दुख, अशान्ति, अपवित्रता के बंधन से छूट सुख के संबंध में मौजों का अनुभव करता है।** ❖

गृहस्थ और संन्यास

• ब्रह्माकुमार नरेश, मुजफ्फरनगर

शास्त्रों में घोर कलियुग की कई निशानियाँ बतलाई गई हैं जिनमें एक यह भी है कि चार आश्रमों में से दो आश्रम अर्थात् गृहस्थ व संन्यास आश्रम ही रह जायेंगे। परन्तु अब संन्यास आश्रम भी महत्ता खो चुका है। एक संन्यासी की जो धारणाएँ एवं मर्यादाएँ हुआ करती थीं, वे अब देखने में नहीं आतीं। वर्तमान समय केवल गृहस्थ आश्रम ही शेष रह गया है परन्तु यह भी आश्रम कहलाने लायक नहीं रह गया है क्योंकि आज घर-घर में जो स्थिति है वह शास्त्रों में वर्णित 'कुरुक्षेत्र के मैदान' जैसी है। आपसी कलह, मन-मुटाव ने घर-परिवार की शान्ति समाप्त कर दी है। 'गृहस्थ आश्रम' को प्रवृत्ति मार्ग माना जाता है परन्तु आज आपसी तालमेल की कमी व दोषारोपण की प्रवृत्ति से ऐसा लगता है कि पति-पत्नी व संतान, इकट्ठे रहते हुए भी निवृत्ति (संन्यास) मार्ग में चले गए हैं।

परम-सुख भूल चर्म-सुख में फँसा

हमारे पुरखों ने अनुभव किया कि जन्म के बाद जब तक शारीरिक वृद्धि व बौद्धिक विद्या अर्जन चलता है, तब तक ब्रह्मचर्य आश्रम आवश्यक है। विवाह के बाद जब तक वंशवृद्धि व संतान को आत्मनिर्भर बनाया जाता है तब तक गृहस्थ आश्रम आवश्यक है। पारिवारिक व सामाजिक ज़िम्मेवारियों से मुक्त होने पर वानप्रस्थ आश्रम ज़रूरी है। संन्यास आश्रम में व्यक्ति भगवान के ध्यान-साधना हेतु वन या एकान्त में गमन करता है। यह चतुर्थ आश्रम अब ऐसे ही लुप्त हो गया है जैसे कि विश्व के कई दुर्लभ पशु-पक्षियों की प्रजातियाँ। इक्का-दुक्का ऊँचा संन्यासी यदि है भी, तो वह अपने को प्रत्यक्ष नहीं करता है क्योंकि आज के भावना प्रधान भक्त उसे भगवान समझ, चैन से तपस्या करने नहीं देंगे। चल रहे घोर कलियुग में स्थिति यह है कि कोई भी वानप्रस्थी या प्रौढ़ अवस्था पार कर चुका व्यक्ति, अपने घर-परिवार से निवृत्त होना नहीं चाहता। यदि वृद्धावस्था में भी युगल का निधन हो गया हो, तो दूसरी शादी करने में कोई झिझक, परहेज़ या संकोच नहीं करता। प्रवृत्ति में रहते वृत्ति ऐसी विकारी हो गई है कि यह 'परम-वृत्ति' अर्थात् परमात्मा के प्रति झुकाव में ना जाकर 'पर-वृत्ति' अर्थात् देहधारियों के प्रति लगाव में अन्तिम सांसों तक फँसी रहती है। मनुष्य शिव-प्रदत्त 'परम-सुख' प्राप्त करने के बजाय, इन्द्रिय-जनित क्षणिक 'चर्म-सुख' में फँसा पड़ा है।

बुद्धि की डोर जुड़ी रहे परमपिता से

देखा जाये तो प्रवृत्ति व निवृत्ति मार्ग मानसिक स्थितियाँ हैं और दोनों साथ-साथ चल सकती हैं, बस ध्यान यह रखना है कि प्रवृत्त किसमें होना है व निवृत्त किसमें। मनुष्य यदि श्रेष्ठ जीवन चाहता है, जो पशुओं से उच्च हो तो उसे कर्मयोगी बनना होगा। कर्मयोगी प्रवृत्ति में रहते ही बन सकता है, निवृत्ति में नहीं। उसे सांसारिक व पारिवारिक ज़िम्मेवारियों से न तो शरीर से भागना है और न ही मन से। समाज में या प्रवृत्ति में रहते हुए उसे दैहिक लगाव, ममत्व, आकर्षण आदि से ऊपर उठना है। शरीर से कर्म करे, संबंधों का अनासक्त भाव से निर्वाह करे, परन्तु मन ऊपर उठे अर्थात् ऊपर वाले परमपिता परमात्मा से याद की डोर से जुड़ा रहे। दूसरे शब्दों में, **शरीर रूपी पतंग, मन-बुद्धि रूपी डोरी से, परमपिता शिव से इस भाव से जुड़ी रहे कि यह उलटी पतंग (पतंग नीचे, उड़ाने वाला ऊपर) परमपिता की श्रीमत रूपी इशारे पर 'कर्म-नृत्य' कर रही है। शरीर है पतंग व आत्मा है डोरी। माया के तूफान पतंग व डोरी, दोनों को हिलाते-डुलाते हैं परन्तु एक मज़बूत डोरी (आत्मा) परमात्मा से सतत्**

शक्ति पाती रहती है और तूफानों में नहीं डिगती। यह शरीर रूपी पतंग जब भी समय पूरा करे, तब भी बुद्धि की डोर उस परमपिता से वैसे ही जुड़ी रहे जैसे लौकिक पतंग के कट जाने के बाद भी इसका धागा, उड़ाने वाले के हाथ से जुड़ा होता है।

अभी विश्व में विभिन्न समाजसेवी संस्थाओं के द्वारा जनकल्याण हेतु सेवा की होड़ लगी पड़ी है परन्तु कल्याण व उत्थान होता दिखाई नहीं पड़ता। कारण है, सेवा में त्याग व तपस्या का अभाव। सेवा के अवसर प्रवृत्ति में रहते हुए ही मिल सकते हैं। इससे जो दुआएँ व शुभकामनाएँ मिलती हैं, वे तपस्या में शक्ति भरती हैं। निवृत्ति मार्ग पर चल कर जन-सेवा के अवसर कम हो जाते हैं। और ही मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु गृहस्थ मार्ग वालों पर आश्रित होना पड़ता है। इससे सेवा देने के बजाय सेवा लेने के कारण आत्मा पर बोझ ही चढ़ता है।

एक बाप, दूसरा न कोई यह है महातपस्या

शिव परमात्मा ने बतलाया है कि **''त्याग को त्याग ना समझ भाग्य अनुभव करना, इसको कहा जाता है 'सच्चा त्याग'। अगर संकल्प या वाणी में भी ऐसी भावना है कि 'मैंने यह त्याग किया', तो भाग्य नहीं बनता।'' तपस्या के संबंध में शिव बाबा ने बतलाया है कि ''एक बाप (शिव भगवान) दूसरा न कोई, यह है महातपस्या। ऐसी तपस्या का बल विश्व परिवर्तन कर लेता है। आप बच्चे एक टांग पर नहीं, एक की स्मृति में रहते हो, बस एक ही एक।''**

स्वामी विवेकानन्द ने कर्मयोग पर दिये गये अपने व्याख्यान में कहा था कि ''एक गृहस्थ का जीवन भी उतना ही श्रेष्ठ है जितना कि एक संन्यासी का। यह कहना गलत है कि गृहस्थ से संन्यासी श्रेष्ठ है।'' आज के संदर्भ में देखा जाये तो एक गृहस्थ कलियुगी परिस्थितियों में रहते हुए भी अपनी गृहस्थी की गाड़ी खींचने के प्रति संघर्षशील है। परन्तु आज जब संन्यासियों के तप की समाज को ज्यादा आवश्यकता है तो सच्चा संन्यासी ढूँढ़े भी नहीं मिलता। इसके पीछे रहस्य यह है कि घोर कलियुग के अन्त में घर-गृहस्थ में रहते संन्यास व तप का दैवी विधान है क्योंकि आने वाली नई सतयुगी सृष्टि में श्रेष्ठ गृहस्थ तो होंगे परन्तु संन्यासी नहीं।

महर्षि रमण के शब्दों में – ''अपने व्यक्तित्व का त्याग ही संन्यास है। जो अपने को संन्यासी मानता है, वह संन्यासी ही नहीं है। एक गृही अपने को गृही न माने तो वह संन्यासी है।'' यहाँ महर्षि रमण का 'व्यक्तित्व' से भाव उन संस्कारों से है जो देहभान में रहते आसुरी वृत्तियों के वश आत्मा ने धारण कर लिये हैं।

दयावान बनो दया के पात्र नहीं

अभी चूँकि मनुष्यों में सारे संस्कार ही उलटे हो गये हैं (जिसका अहसास मनुष्यों को नहीं है) अत: शिव प्रदत्त 'सहज राजयोग' के ज्ञान के द्वारा भाग्यशाली मनुष्य अपने संस्कारों को उलटने में लगे हुए हैं। यह उलटना अर्थात् सीधा करना, अनभिज्ञ मनुष्यों को उलटी बात लगती है। वे समझते हैं कि ब्रह्माकुमारियाँ तो समाज की चलन व परम्पराओं के विपरीत बातें सुना रही हैं। यदि ऐसे मनुष्य दूर खड़े होकर विभ्रमित होने की बजाय पास आकर इन बातों को देखें, समझें तो उन्हें अपनी भूल का अहसास हो। स्वयं को यूं ही सही समझना और दूसरे को गलत मानना, कई बार स्वयं की बड़ी हानि का कारण बन जाता है, जिसका बाद में घोर पश्चाताप होता है। अभी चल रहे 'ईश्वरीय कार्य' को ना समझ पाना तो पाँच हज़ार वर्षों के सारे कल्प की सबसे बड़ी भूल साबित होगी, इसकी भी महसूसता निरीह मनुष्यों को नहीं है। ऐसे में एक सहज राजयोगी को अपने श्रेष्ठ भाग्य पर नाज़ होता है और वंचित मनुष्यों के प्रति उसमें दया भाव पैदा होता है। **शिव के प्रति 'याद' व सर्व आत्माओं के प्रति 'दया', यह आत्म-उन्नति का साधन है। श्रेष्ठ मनुष्य वही है जो दयावान हो, दया का पात्र नहीं।**

दयावान वह है, जो कर्म या प्रवृत्ति में रहते अपना तो भला करे ही, दूसरों का भी भला करे। दया का पात्र वह है, जो कमज़ोर संकल्पों में प्रवृत्त होने के कारण, श्रेष्ठ कर्म से निवृत्त हो जाये और न तो स्वयं का कल्याण करने में सक्षम हो और ना दूसरों का कल्याण करने में प्रवृत्त हो पाये।

सारी सृष्टि ही परिवार है

उपरोक्त बातों से यह सवाल उठ सकता है कि ब्रह्माकुमारियाँ तो स्वयं ही घर-परिवार को छोड़ निवृत्ति में चली गई हैं और बातें श्रेष्ठ प्रवृत्ति की करती हैं परन्तु दूर खड़े जिज्ञासुओं को यह पता नहीं है कि **ब्रह्माकुमारी संस्था स्वयं में एक विशाल परिवार है। इस परिवार के हर सदस्य को बाप, दादा, दादी, माता-पिता, दीदी, भाई-बहन, सभी का बेहद प्यार मिलता है। यह एक ऐसा संयुक्त परिवार है जिसमें वे सारी मर्यादाएँ निभाई जाती हैं जिनका आज एक आम परिवार में अभाव दिखाई देता है। यहाँ वह शिष्टाचार, तौर-तरीके सिखलाये जाते हैं जो सतयुग में होंगे। सतयुग में सभी मनुष्य अपने-अपने परिवार में रहते भी, अलग-अलग परिवार के होने की सीमित भावना से मुक्त होंगे। वे बेहद सृष्टि को ही अपना परिवार समझेंगे। इसी ऊँची सोच का संस्कार अभी ब्रह्माकुमारी संस्था में डाला जा रहा है।** ❖

याद और फ़रियाद

ब्रह्माकुमार सुनील खुशनसीब, गांधीधाम (गुजरात)

आज के दौर में मानव के पास वो सब कुछ है जिसकी कुछ सालों पहले कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। रहने के लिए आलीशान महल, मोटर-गाड़ियाँ लेकिन फिर भी उसके मन में खुशी व शान्ति नहीं है क्योंकि वह रीस करता है, रेस नहीं। किसी और के पास अपने से अधिक वैभव देखते ही वह ईर्ष्या करना शुरू कर देता है और इस तरह जिंदगी की रेस में पीछे छूटने लगता है। फिर वह भगवान से फ़रियाद करता है कि मुझे यह दे दो, वह दे दो। इस पर एक संत की बात याद आती है। एक गाँव में वह सन्त प्रवचन करने गया। वहाँ के कुछ लोगों ने उस ज्ञानी संत को अपने-अपने दुख सुनाये। संत ने पूछा, इनकी समाप्ति के लिए आपने क्या कुछ किया है? उन लोगों ने बतलाया कि हमने ईश्वर से बहुत फ़रियाद की है कि हमें इन दुखों से बचा लो। संत ने पूछा – क्या फ़रियाद के अलावा और भी कुछ किया है? लोगों ने जवाब दिया, हम तो फ़रियाद ही करना जानते हैं और उसी में अपना सारा समय लगाते हैं। तब उस दयालु संत ने कहा – 'हे भक्तो, भगवान फ़रियाद से नहीं, सच्चे हृदय की याद से प्रसन्न होते हैं। जैसे एक भिखारी दरवाज़े पर फ़रियाद करता है पर उसे क्या मिलता है? एक रुपया या मुट्ठी भर अनाज। परन्तु एक पुत्र तो पिता को याद करता है। पिता की प्रेम भरी याद उसके दिल में बसी ही रहती है इसलिए बिना फ़रियाद के ही उसे सब कुछ पिता से मिल जाता है। आप भी अपने को प्रभु का पुत्र निश्चय करके उसे याद करो, सब दुख दूर हो जायेंगे।'

इस दृष्टांत से यह सीख मिलती है कि जितना समय हम फ़रियाद में गंवाते हैं उससे आधा वक्त भी प्रभु की याद में या प्रभु का शुक्रिया मानने में लगायें तो खुशी में वृद्धि होती है और दुख समाप्त हो जाते हैं। कई बार तो फ़रियादों से हम अपना दुख बढ़ा लेते हैं। प्रभु को याद करने की सहज और सही विधि ब्रह्माकुमारीज़ के हर सेवाकेन्द्र पर नि:शुल्क सिखाई जाती है। इसके लिए प्रभु का सच्चा परिचय और स्वयं का भी सच्चा परिचय चाहिए। खुद को जानकर ही खुदा से सच्ची याद जुड़ सकती है। ❖

पवित्र जीवन : मज़ा ही मज़ा

• ब्रह्माकुमार देवेन्द्रनारायण पटेल, मुलुंड (मुंबई)

मैट्रिक में पढ़ता हुआ एक विद्यार्थी सोचता है कि अच्छे नंबर मिल जाएं तो अच्छे कॉलेज में एडमिशन मिल जाये। एडमिशन मिलने के बाद, कॉलेज के अंतिम वर्ष में सोचता है, फर्स्ट क्लास में पास हो जाऊँ तो अच्छी ऊँची नौकरी मिल जाए तो सुखी हो जाऊँ। ऊँची नौकरी भी मिल गई। दो-चार साल बाद सोचता है, अकेला हूँ, शादी हो जाये, सुंदर पत्नी मिल जाये तो मज़ा आ जाये। शादी भी हो गई। एक-दो साल बाद सोचता है, घर सूना-सूना लगता है, बच्चे हों तो थोड़ी किलकारियाँ गूँजें, घर में रौनक हो, समय भी गुज़रे। फिर बच्चे भी हो जाते हैं। थोड़े वर्षों बाद बच्चे बड़े हो जाते हैं। शादी के लायक बच्ची के लिए इधर-उधर रिश्ता तलाश करता है। बहुत परिश्रम और ढूँढ़ते-ढूँढ़ते हैरान-परेशान होने के बाद आखिर लड़का मिल जाता है। लड़की की शादी हो जाती है। वह अपने को हलका महसूस करता है।

संसार में सार नहीं है

ऐसा एक व्यक्ति रास्ते में मुझे मिला। मैंने पूछा, साहब, कैसे हो? वह बोला, भाई जी, सचमुच संसार में कोई सार नहीं है। उत्तर सुनकर मैं तो अवाक् रह गया। मन में उत्पन्न सारी इच्छाओं के पूरा होने के बाद भी यह व्यक्ति यही कह रहा है कि संसार में कोई सार नहीं है। 'संसार में सार नहीं है', यह छोटी-सी बात समझने में इसने 70 वर्ष लगा दिए परन्तु वे कुमार-कुमारी तो बड़े समझदार निकले जिन्हें युवावस्था की सीढ़ी पर पहला कदम रखते ही यह छोटी-सी बात समझ में आ गई और वे उलटी सीढ़ी चढ़ने से बच गए। विकारों रूपी पहाड़ पर उस सज्जन जैसे लोग पहले चढ़े और अब उतरने की मेहनत में लगे हैं, उससे कुमार-कुमारी साफ-साफ बच गए परन्तु कई बार, कई कुमार भी पवित्रता के जीवन का आनन्द नहीं ले पाते हैं। उनके मन में कभी-कभी आ जाता है कि कब तक सुबह उठो, खुद ही पानी का मटका भरो, झाड़ू लगाओ, खाना बनाओ फिर सेंटर पर जाओ, फिर काम पर जाओ फिर..। शाम को घर लौटो तो फिर खाना बनाओ, बर्तन साफ करो, किचन साफ करो, सुबह हुई तो फिर वही रामायण! छुट्टी आई तो पूरे हफ़्ते के मैले कपड़े साफ करो, घर को साफ करो। बाज़ार भी खुद जाओ, बिजली-टेलिफोन का बिल भरो, गैस सिलेण्डर लेने के लिए लाइन में लगो, देर हो जाए तो ऑफिस में डाँट पड़े। कभी बीमार पड़ जाएं तो कोई देखने वाला नहीं। माँ थी तो पूछती थी, अब कोई पूछने वाला रहा नहीं।

एकांत में चले जाओ

मेरे कुमार-कुमारी भाई-बहनो, यदि अकेले में ऐसे संकल्प चलते हैं ना, तो आप सचमुच अकेले हो जाओ। एकांत में चले जाओ, अपने आप से बातें करो, भीतर की दुनिया में आ जाओ। तब आपको अपने जीवन से बहुत मज़ा आयेगा। हर बात का रास्ता निकल सकता है। शिव बाबा ने सब बातों का उत्तर दिया है, ज़रूरत है ज्ञान के सही समय पर, सही उपयोग की।

'काम' की दलदल

एक कुमार था। उसकी माँ ने कहा, तू शादी नहीं करेगा तो मैं मुंबई के समुद्र में डूब कर मर जाऊँगी। कुमार ने शादी कर ली। माँ को तो जाना ही था, थोड़े समय के बाद चली गई। पर कुमार से अधर कुमार बने इस भाई के पहले दो बच्चे हुए, बाद में दो जुड़वाँ बच्चे और हुए। उसके बाद पत्नी मर गई। अब चार छोटे बच्चों को कौन संभाले, इसलिए दूसरी शादी की, उससे भी दो बच्चे और हो गए। आज छह बच्चों की पालना और उसमें भी चार बच्चों की सौतेली माँ, क्या-क्या सहना पड़ता है बेचारे को। कोई कह सकता है कि सबके साथ

ऐसा ही हो, यह निश्चित तो नहीं है। हाँ, सबके साथ एक-जैसा नहीं होता क्योंकि सबके कर्म अलग-अलग हैं। **परन्तु कोयले की दलाली में किसी के गाल पर और दूसरे के नाक पर कालिख लग जाती है, पर लगती अवश्य है। इसी प्रकार, काम की दलाली में, काम विकार के दलदल में किसी को कोई खामियाज़ा और किसी को कोई खामियाज़ा उठाना पड़ता है।** इसलिए हे कुमारो, कन्याओ! पवित्रता का महत्त्व जानो। पवित्रता है तो शौर्य, वीरता, संपत्ति सब कुछ है। कितने ही खिलाड़ियों के उदाहरण हमारे सामने हैं, जब तक कुमार थे, बहुत ही नाम था, कीर्ति थी, बहुत शौर्य का प्रदर्शन किया। सुंदर फिल्म अभिनेत्रियाँ भी जब तक ब्रह्मचर्य में रहती हैं, चमक, दमक विशेष बनी रहती है।

पवित्रता है तो मज़ा है

गृहकार्यों में मदद के लिए किसी न किसी की अवश्य ही ज़रूरत होती है परंतु मदद सिर्फ जीवनसाथी ही कर सकता है, ऐसा हरगिज़ नहीं है। यदि आप अच्छा कमाते हो तो घर का सब काम करने के लिए काम वाली मिल सकती है। रही खाना बनाने की बात, उसके लिए भी किसी ज़रूरतमंद, धारणामूर्त माता को पैसा देकर खाना बनवा सकते हो। बाकी की बातें..अकेलापन, मनोरंजन, निराशा, सुख-दुख का लेन-देन, भय, चिंता आदि के लिए आप अपनी पवित्रता को ठीक करो। पवित्रता के ठीक होने से सब कुछ अपने आप ठीक हो जायेगा। पवित्रता में बहुत बड़ी ताकत है। पवित्रता किसी मॉल या बाज़ार में मिल नहीं सकती। पवित्रता बहुत बड़ी सिद्धि है, उससे आप अनेक असंभव मनइच्छित कार्य सिद्ध कर सकते हैं। दुनिया में लोग पैसा कमाते हैं दो चीज़ें प्राप्त करने के लिए, एक, सुख और दूसरी, शांति परंतु विचार करो कि जिनके पास बहुत पैसा है, क्या उनके पास सुख-शांति है? ईश्वरीय महावाक्य हैं, जहाँ पवित्रता है वहाँ ही सुख और शांति है। हम कुमार-कुमारियों के पास तो पहले से ही पवित्रता है, कितनी खुशी की बात है। सिर्फ पवित्रता रूपी अमूल्य खज़ाने को हमें संभाल कर रखना है। पवित्रता है तो मज़ा है, अपवित्रता है तो दुख, अशांति की सज़ा है।

आत्मा रूपी मोबाइल को प्रतिदिन चार्ज करो

भगवानुवाच है, काम नर्क का द्वार है। यह काम आपके सब काम बिगाड़ सकता है। बाबा ने कहा है, पवित्रता ही सर्व समस्याओं का हल है। आपके पास कोई समस्या है, कोई उलझन है घर, धंधे, दफ़्तर में, उसका पहला मुख्य कारण है, मन के किसी कोने में छिपी हुई वासना, अपवित्रता। आप का कोई काम सालों से अटका हुआ है, किसी कार्य में बार-बार निष्फलता मिलती है, किसी से घड़ी-घड़ी टकराव होता है या कुछ और गड़बड़ है तो इन सबको जीतने के लिए अपनी पवित्रता की शक्ति को ठीक करो, सब कुछ ठीक हो जायेगा। पवित्र बनो और तुरन्त लाभ पाओ। अभी बनो, अभी पाओ। मोबाइल को रोज़ चार्ज करते हो ना। ऐसे ही आत्मा रूपी मोबाइल को पवित्रता के महासागर शिव बाबा से रोज़ चार्ज करो। अपने अंदर पवित्रता भरते जाओ।

मज़बूत करो पवित्रता को

यदि किसी खूबसूरत कन्या को देखकर गंदे विचार चलते हैं तो विचार करो, दुनिया में जितने भी शरीर हैं, एक दिन सड़ने वाले हैं, सड़कर खत्म होने वाले हैं, एक दिन चिता पर चढ़ने वाले हैं। आज हैं, कल नहीं रहेंगे। सभी विनाशी हैं। यदि यह बात समझ में नहीं आती है तो एक दिन श्मशान में जाकर देख लो। साथ-साथ यह भी विचार करो, यह शरीर कितना गंदा है। आँखें अच्छी लगती हैं पर उनमें भी गंदगी भरी हुई है। नाक को थोड़ा ऊपर करके तो देखो, कितनी गंदी नाली बह रही है, बदबू आ रही है। मुख बलगम से भरा हुआ है। खुद का मुँह फाड़ कर अंदर का सब कुछ देख लीजिए। कान भी मैल से भरा हुआ

है। आगे और पीछे देखिए, शरीर मूत्र और मल से भरा हुआ है। हर अंग में गंदगी भरी हुई है। बिना आत्मा वाले शरीर की कल्पना करो। उसको छूने में भी भय महसूस करेंगे। बाबा कहते हैं, शरीर को शरीर नहीं, शव समझो, तब ही शरीर से वैराग्य आयेगा। आत्मा, शरीर में है परन्तु हमने शरीर को, आत्मा में बिठा दिया है इसलिए पवित्रता हमें मुश्किल लगती है। शरीर को ठीक रखना है, खूबसूरत बनाना है, जल्दी बूढ़े नहीं होना है, आँखों में नूर कायम रखना है, स्मरण शक्ति तेज़ रखनी है तो अपनी पवित्रता को मज़बूत करो। विकार में ही सुख होता तो आज दुनिया का कोई अधरकुमार दुखी नहीं होता। विकार, वासना ही शरीर और आत्मा का सत्यानाश करते हैं।

इसलिए हे कुमार, कुमारियो! कुछ भी हो जाये परंतु हमें अपवित्र नहीं बनना है। दुनिया में सबके पास सब कुछ है, सिर्फ कमी है तो पवित्रता की। इसलिए ही आज लोग, सब कुछ होते हुए भी पूरी तरह सुखी नहीं हैं; दुख, तनाव बढ़ता ही जा रहा है। याद रखो, पवित्रता है तो जीवन में मज़ा ही मज़ा है और अपवित्रता है तो धर्मराज की सज़ा ही सज़ा है। उनको तो उस समय भगवान भी बचा नहीं सकता है। ❖

आगे कदम बढ़ाना है

ब्रह्माकुमारी सुमन, अलीगंज (लखनऊ)

तुम परमपिता के बच्चे हो, तुम्हें ऐसा कर दिखलाना है,
लहरों से साहिल को ढूँढ़ो, नहीं तूफां से घबराना है,
सदा आगे कदम बढ़ाना है, तुम्हें आगे बढ़ते जाना है।

मारा-मारी की दुनिया में, सुख-चैन तुम्हें देना होगा,
दुख के झंझावातों में, सुख-सावन बरसाना होगा,
उजड़े मंजर में फिर से, फूलों को हर्षाना होगा,
आश्वस्त करो उस पीढ़ी को, तुम्हें जिसका कर्ज चुकाना है।
सदा आगे कदम बढ़ाना है, तुम्हें .....

देखो कहीं अटक मत जाना, माया के वाद-विवादों में,
कितनी मुश्किल बाधायें हों, पक्के रहना इरादों में,
खरा उतरना है वीरो, करनी-कथनी के वादों में,
मन के तप से संताप मिटा, तुम्हें दैवी इतिहास जगाना है।
सदा आगे कदम बढ़ाना है, तुम्हें .....

प्रभु की सेना के नायक, तुम नवभारत के शिल्पकार,
हैं साथ स्वयं भगवान तुम्हारे, करते नव ऊर्जा संचार,
तुम आँख उठाके देखो तो, आगे-पीछे लम्बी कतार,
हर शख्स भले बेगाना हो, पर तुमको साथ निभाना है।
सदा आगे कदम बढ़ाना है, तुम्हें .....

हर मंज़िल दस्तक देती है, पुरुषार्थ की उत्तम रेखा पर,
तकदीर बदलती है, सत्कर्मों की अभिलेखा पर,
मन को भारी मत करना, तुम्हें जग का भार उठाना है।
सदा आगे कदम बढ़ाना है, तुम्हें .....

नहीं शेर ढूँढ़ा करते, पदचिन्हों में अपने पथ को,
जाँबाज़ नहीं माँगा करते, कभी किसी की रहमत को,
हो तुम प्रभु के प्रिय प्रतिनिधि, खुद में यह भाव जगाना है।
सदा आगे कदम बढ़ाना है, तुम्हें .....

श्रद्धांजलि एक कर्मठ और आध्यात्मिक व्यक्तित्व को

आपका जन्म सन् 1942 में हापुड़ (उ.प्र.) में हुआ। आप आजीवन बाल ब्रह्मचारी थे। विज्ञान में स्नातक की उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् आपने प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के साकार संस्थापक पिताश्री प्रजापिता ब्रह्मा बाबा के सान्निध्य में 14 वर्ष तक त्याग, तपस्या और सेवा का अनुभव प्राप्त किया और संपूर्ण जीवन ही ईश्वरीय सेवार्थ, मानव-कल्याण व सामाजिक उत्थान के लिए समर्पित कर दिया।

आप राजयोग एज्युकेशन एंड रिसर्च फाउण्डेशन के प्रशासक सेवा प्रभाग के राष्ट्रीय अध्यक्ष, ब्रह्माकुमारीज़ एज्युकेशन सोसायटी के कार्यकारिणी सदस्य और भोपाल क्षेत्र के क्षेत्रीय निदेशक थे।

आपने मध्य प्रदेश व उत्तर प्रदेश में ब्रह्माकुमारीज़ के लगभग 150 से भी अधिक सेवाकेन्द्रों की स्थापना की। आपने दिव्य प्रेरणा देकर 250 से भी अधिक भाई-बहनों का इस पुनीत कार्य में समर्पण कराया। आपके कुशल निर्देशन में जयपुर, आगरा, आबू पर्वत, भोपाल, सिंगरौली, ग्वालियर आदि स्थानों पर

आध्यात्मिक संग्रहालयों का निर्माण हुआ। वर्ष 1995 में आपने एक संपूर्ण रंगीन, आध्यात्मिक पाक्षिक पत्र 'ज्ञानवीणा' का प्रकाशन एवं संपादन प्रारंभ किया जो भारत व विश्व के अन्य देशों में भी पढ़ा जाता है। आपने भोपाल, पटना, जयपुर, कटक, चण्डीगढ़ आदि महानगरों में एक-एक लाख की जन-सभाओं के मेगा प्रोग्राम आयोजित किये।

आपका बहुत गुप्त तीव्र पुरुषार्थ था, बहुत अच्छी तपस्या थी, त्यागमूर्त भी नंबरवन थे। सेवा में तो एक-एक सेकण्ड, एक-एक संकल्प सफल किया। बाबा आपको प्यार से किंग महेन्द्र कहकर संबोधित करते थे। मधुबन में जो भी मीटिंग्स अथवा सम्मेलन आदि होते, उनमें भी आपका बहुत अहम पार्ट रहता था। आपको कुछ समय से डायबिटीज़ की बीमारी थी लेकिन अभी कोई तकलीफ नहीं थी। इस तरह का पार्ट बजाने वाली आप महान तपस्वी, महान योगी, महान दैवीगुण संपन्न आत्मा ने अचानक आए हार्ट अटैक में 30 मार्च, 2009 सोमवार को दिन में एक बजे देह त्यागकर विश्व परिवर्तन की भावी ईश्वरीय सेवा-योजनाओं के लिए अव्यक्त आरोहण किया। हम सर्व ब्रह्मावत्सों की ओर से आपको अलौकिक श्रद्धांजलि, पुष्पांजलि स्वीकार हो!!!

ईश्वर की गोद का अहसास

परमपिता परमात्मा द्वारा ज्ञानामृत पीने, ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने तथा योगाभ्यास करने से मनुष्य को शरीर छोड़ते समय दुख या पश्चाताप नहीं होता क्योंकि एक तो उसने विकर्म नहीं किये होते कि पश्चाताप हो और दूसरे, वह शरीर भी ऐसे छोड़ देता है जैसे मनुष्य सहज ही अपने वस्त्र उतार देता है अथवा सर्प अपनी पुरानी खाल उतार कर नई धारण कर लेता है। ज्ञान अमृत का सेवन करने वाला तथा योग का अभ्यास करने वाला मनुष्य ऐसा अनुभव करता है जैसे कि वह ईश्वर की गोद में जा रहा हो। जैसे कोई मुसाफिर सहज ही सराय को छोड़कर घर में विश्रामी होता है, वैसे ही वह संसार रूपी सराय को छोड़कर परमधाम की मंज़िल पर पहुँच जाता है।

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, सम्पादक, ज्ञानामृत भवन, शान्तिवन, आबू रोड द्वारा सम्पादन तथा ओमशान्ति प्रिन्टिंग प्रेस, शान्तिवन -307510, आबू रोड में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के लिए छपवाया। संयुक्त सम्पादिका - ब्र.कु. उर्मिला, शान्तिवन
E-mail : omshantipress@bkivv.org Ph. No. : (02974) - 228125 worldrenewal@bkivv.org